अभिनव कृषि

वर्ष-7 अंक-1 मार्च, 2025 रजि. नं. : RAJHIN/2021/81869

विशेषांक

● हाई-टेक बागवानी ● फल-फूल एवं सब्जी उत्पादन ● जायद खेती ● पशुपालन प्रबंधन ● फल सब्जी परिरक्षण एवं खाद्य प्रसंस्करण।

प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)-324001

FMC
An Agricultural Sciences Company
सोयाबीन में फसल
सफलता की राह...
हमारी उत्पाद श्रंखला के साथ
Galaxy
Authority NXT
1 kg
Coragen
60ml
Galaxy
SIDRA
Arc
Available on iOS and Android
Customer Care No.: 1800 102 6545
E-mail : ask@fmc.com
FMC, the FMC logo, Coragen, Authority NXT, Galaxy, Galaxy NXT and Furagro Legend are trademarks of FMC Corporation and/or an affiliate. ©2025 FMC Corporation. All rights reserved

अभिनव कृषि

वर्ष-7 अंक-1 मार्च, 2025 रजि. नं. : RAJHIN/2021/81869

संरक्षक

डॉ. अभय कुमार व्यास
माननीय कुलपति, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

सम्पादक मण्डल

डॉ. प्रताप सिंह
निदेशक प्रसार शिक्षा
प्रधान संपादक एवं प्रकाशक

डॉ. के.सी.मीना
सह आचार्य (प्रसार शिक्षा)
संपादक एवं समन्वयक

डॉ. राकेश कुमार बैरवा
सह आचार्य (शस्य विज्ञान)
संपादक

डॉ. घनश्याम मीना
सह आचार्य (पशुपालन विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. डी.एल. यादव
सहा. आचार्य (पादप रोग विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. अरविन्द नागर
विषय विशेषज्ञ (उद्यान विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. सेवाराम रूण्डला
विषय विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. रूप सिंह
विषय विशेषज्ञ (पौध सरंक्षण)
सह–संपादक

श्रीमती गुंजन सनाढ्य
विषय वस्तु विशेषज्ञ (गृह विज्ञान)
सह–संपादक

सुश्री सरिता
तकनीकी सहायक
सह–संपादक

मनोनीत सलाहकार मण्डल

डॉ.एस.के. जैन
निदेशक, अनुसंधान

डॉ. आशुतोष मिश्रा
अधिष्ठाता, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

डॉ. वीरेन्द्र सिंह
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, कोटा

डॉ. एन.एल. मीणा
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, हिण्डौली

डॉ. मुकेश चन्द गोयल
निदेशक, पी.एम.एण्ड ई.

डॉ. महेन्द्र सिंह
निदेशक, मानव संसाधन विकास

सदस्यता शुल्क

- त्रैमासिक (प्रति अंक) 30 रू.
- वार्षिक (चार अंक) 100 रू
- आजीवन (15 वर्ष)1000 रू.

विज्ञापन दरें

(i)	अन्तिम सम्पूर्ण (रंगीन)	रू. 10,000/-
(ii)	प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे (रंगीन)	रू. 6,000/-
(iii)	अन्तिम आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 5,000/-
(iv)	प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 3,000/-
(v)	अन्दर का सम्पूर्ण पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 4,000/-
(vi)	अन्दर का आधा पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 2,000/-

नोट : यदि विज्ञापन वर्ष के सभी चार अंकों के लिए दिया जाता है तो उपरोक्त दरों में 25 प्रतिशत की कमी की जायेगी।

सदस्यता एवं नवीनीकरण हेतु

खाता धारक : DEE, Agriculture University, Kota
बैंक : ICICI BANK, Nayapura, Kota
खाता संख्या : 687801700345
IFSC : ICIC0006878

लेख एवं सुझाव भेजने का पता

"अभिनव कृषि"
प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
बोरखेड़ा, बारां रोड़ कोटा (राजस्थान) – 324001
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com दूरभाष : 0744- 2326727

प्रकाशक: प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
मुद्रक : डामयण्ड प्रिन्टर्स, नई धानमण्डी, कोटा (राज.) मो. 9414231079

नोट– "अभिनव कृषि" में आलेख प्रकाशन हेतु लेखकों का सदस्य होना अनिवार्य है तथा लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

डॉ. प्रताप सिंह
निदेशक (प्रसार शिक्षा)

Directorate of Extension Education
प्रसार शिक्षा निदेशालय
AGRICULTURE UNIVERSITY, KOTA
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Borkhera, Baran Road, Kota 324 001 (Raj.)
बोरखेडा, बारां रोड, कोटा 324001 (राज.)

प्रधान संपादक की कलम से.....

कृषि क्षेत्र में सतत विकास और उत्पादन वृद्धि के लिए आधुनिक तकनीकों का समावेश आवश्यक हो गया है। हाइड्रोपोनिक्स, संरक्षित खेती, जलवायु अनुकूल तकनीकें, जैविक खेती, हाई–टेक हॉर्टिकल्चर, फसल विविधता और मूल्य संवर्धन जैसी उन्नत पद्धतियाँ किसानों के लिए अत्यधिक लाभदायक सिद्ध हो सकती हैं। संरक्षित खेती जैसे पॉलीहाउस, नेट हाउस और ग्रीनहाउस तकनीकें मौसम की अनिश्चितताओं से बचाव करते हुए, फल, सब्जियाँ, फूलों और औषधीय पौधों के उत्पादन को बढ़ावा देती हैं।

फसल विविधता और जायद फसल उत्पादन किसानों को अतिरिक्त आय अर्जित करने में सहायक हो सकते हैं। साथ ही, हरा चारा उत्पादन और पशुपालन के वैज्ञानिक तरीके डेयरी आधारित उत्पादन को बढ़ाने में सहायक हैं। हाई–टेक हॉर्टिकल्चर के माध्यम से फलों, सब्जियों और औषधीय पौधों की खेती को अधिक लाभदायक बनाया जा सकता है। वहीं, फलों और सब्जियों के प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन से उत्पादों का अधिकतम लिया उठाया जा सकता है।

आधुनिक कृषि तकनीकों का उपयोग टिकाऊ कृषि और किसानों की आर्थिक स्थिरता को सुनिश्चित करेगा। मुझे विश्वास है कि यह अंक किसानों, कृषि विशेषज्ञों, विद्यार्थियों और अन्य हितधारकों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगा। मैं सभी पाठकों से इस पत्रिका को और अधिक उपयोगी बनाने के लिए अपने विचार और सुझाव साझा करने का अनुरोध करता हूँ। अंत में, सभी पाठकों, लेखकों, संपादक मंडल और सलाहकार मंडल के सदस्यों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ!

जय हिन्द

(प्रताप सिंह)

वर्ष-7 अंक-1 मार्च, 2025

अभिनव कृषि

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	हाइड्रोपोनिक्स एवं उसके लाभ आयुषी जैन, श्रीधर सिंह लखावत, मोनू कुमारी एवं हर्षित कुमार	1–2
2.	आधुनिक तकनीक सें सब्जी पौध उत्पादन महेश चौधरी एवं अनोप कुमारी	3–5
3.	कद्दूवर्गीय सब्जियों को रोगों से बचाने के उपाय दिनेश चन्द, ज्योति झिरवाल एवं राजेंद्र कुमार शर्मा	6–7
4.	भिण्डी की खेती विशाल मीणा, हरीश वर्मा, इन्दिरा यादव एवं शशि कुमार बैरवा	8–10
5.	फलदार पौधे लगाने की वैज्ञानिक तकनीक अनोप कुमारी, अर्जुन सिंह जाट एवं महेश चौधरी	11–14
6.	राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में कटहल की खेती पूजा जाट, जितेंद्र सिंह, कुमारी मनीषा एवं धनेश्रा कुमारी गुर्जर	15–17
7.	चाइना एस्टर फूल की फसलः एक लाभदायक व्यवसायिक अवसर कंचन मीणा, आशुतोष मिश्र एवं रूपराज कंवर	18
8.	गुलाब की व्यावसायिक खेती में आधुनिक तकनीकों की भूमिका प्रहलाद सहाय शर्मा, रोनक कूड़ी, मनोहर लाल मीणा एवं मयंक शर्मा	19–20
9.	सजावटी इक्सोरा की उन्नत खेती : एक नई पहल रूपराज कंवर, आशुतोष मिश्र एवं कंचन मीणा	21
10.	अतिरिक्त आय का साधन– जायद व ग्रीष्मकालीन मूंग उत्पादन : उन्नत तकनीकी उदिती धाकड़, शालिनी मीणा, सत्यनारायण रेगर एवं एस. एन. मीणा	22–23
11.	मवेशियों में परजीवी नियंत्रण के लिए प्रभावी प्रबंधन विक्रमजीत सिंह, सुरेश चन्द कांटवा, अशोक चौधरी एवं गुलाब चौधरी	24
12.	हाइड्रोपोनिक चारा : वैकल्पिक चारा उत्पादन तकनीक सुरेन्द्र कुमार मीणा, प्रभा सिंह, रवि प्रकाश सैनी एवं महर्षि तोमर	25
13.	शुष्क क्षेत्रीय फलों का प्रसंस्करण कल्पना चौधरी, सोनाली चौधरी, महेंद्र चौधरी एवं ज्योती चौधरी	26–27
14.	सब्जियों का मूल्य संवर्धन (वैल्यू एडिशन) : तकनीक, प्रतिबंध और समाधान मामराज गुर्जर एवं सुनील कुमार मीना	28–29
15.	कार्बन खेती : जलवायु परिवर्तन के समाधान में एक अभिनव कदम शालिनी मीणा, उदिती धाकड़, आर. के. मीणा एवं वर्षा गुप्ता	30–31
16.	दक्षिणी पूर्वी राजस्थान में कृषि–पर्यटन की संभावनाएं प्रताप सिंह, भँवर लाल ढाका, योगेंद्र कुमार मीना एवं अभय कुमार व्यास	32–33

हाइड्रोपोनिक्स एवं उसके लाभ

आयुषी जैन, श्रीधर सिंह लखावत, मोनू कुमारी एवं हर्षित कुमार

राजस्थान कृषि महाविद्यालय, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर

हाइड्रोपोनिक्स मिट्टी के बिना पानी में पौधों को उगाने की एक तकनीक है। पौधे एक पारंपरिक तरीके से ही उगाए जाते हैं, लेकिन उनकी जड़ें मिट्टी के बजाय पानी में होती हैं। वास्तव में, पौधों के बढ़ने के लिए मिट्टी के चार प्रमुख कार्य हैं–पानी, पानी में घुलनशील पोषक तत्व, जड़ों के लिए ऑक्सीजन और पौधे को सहारा देना है। हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली में पौधों की वृद्धि और विकास तेजी से होता है और पौधे स्वस्थ रहते हैं क्योंकि पोषक तत्वों को सटीक गणना करके जरूरत के अनुसार घोल में मिलाया जा सकता है, पौधों को कृत्रिम घोल में उगाया जाता है जो रोगजनकों से मुक्त है। हाइड्रोपोनिक प्रणाली के बंद परिसर के कारण, माइक्रोकलाइमेट को प्रभावी ढंग से प्रबंधित किया जा सकता है।

हाइड्रोपोनिक्स एक ग्रीक शब्द है, जो दो शब्दों से बना है, ''हाइड्रो'' का अर्थ है पानी और ''पोनोस'' का अर्थ है श्रम, जिसका अर्थ है सीधे शब्दों में यह कहा जा सकता है, हाइड्रोपोनिक्स मिट्टी के बिना पौधों को उगाने की विधि है। जिसमे पौधे मिट्टी रहित माध्यम में उगाए जाते हैं और उनकी वृद्धि के लिए पानी में पोषक तत्व मिलाये जाते है। इस विधि में मीडिया कोकोपीट, परलाइट, वर्मीक्यूलाइट व रेत आदि का उपयोग किया जाता है।

हाइड्रोपोनिक खेती का इतिहास

हाइड्रोपोनिक खेती का बहुत पुराना इतिहास है, यह प्राचीन काल से चलती आ रही है और यह केवल कुछ वर्षो में विकसित तकनीक नहीं है। वास्तव में इसकी शुरुआत प्राचीन वनस्पतियों से हुई है और धीरे–धीरे यह अनेक वैज्ञानिक शोधों द्वारा अपने वर्तमान स्वरूप तक पहुँची है। मार्को पोलो ने 1200 ईस्वी के अंत में चीन की अपनी यात्रा के दौरान फ्लोटिंग गार्डन की खोज की। 1600 ईस्वी के दौरान बेल्जियम के जन वान हेल्मोंट ने पौधों की वृद्धि और घटकों पर पहला प्रयोग किया। 1699 ईस्वी में, एक अंग्रेज व्यक्ति, जॉन वुडवर्ड ने मिट्टी के मिश्रण वाले पानी में पौधे उगाए और निष्कर्ष निकाला कि पौधे पानी में कुछ पदार्थो और खनिजों से पोषक तत्व प्राप्त करते है।

1860 के दशक में, दो जर्मन वनस्पति वैज्ञानिकों जूलियस वॉन सैक्स और विल्हेम नॉप ने पानी में घुले पौधों के खनिज पोषक तत्वों के लिए पहला मानक सूत्र तैयार किया। 1920 और 1930 के दशक के दौरान, हाइड्रोपोनिक्स शब्द विलियम एफ गेरीक द्वारा गया और इसे लोकप्रिय बनाया। 1940 के दशक में, सैनिकों को आपूर्ति करने के लिए पृथक, गैर–कृषि योग्य वेक द्वीप पर हाइड्रोपोनिक्स का उपयोग किया गया था 1950 के दशक में दुनिया भर के कई देश जेसे फ्रांस, स्पेन, इटली, इंग्लैंड, जर्मनी, यूएसएसआर, इजराइल आदि ने ब्यवसायिक खेती और ग्रीनहाउस के लिए हाइड्रोपोनिक्स शुरू किया। उसके बाद कई हाइड्रोपोनिक प्रणालियों का आविष्कार किया गया और उपयोग में लाया गया, जिसमें पोषक तत्व फिल्म तकनीक, ड्रिप सिस्टम और एरोपोनिक्स शामिल हैं। हाल के दो दशकों में, दुनिया भर में बड़े पैमाने पर लाखों लोगों के लिए खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराने के लिए ग्रीनहाउस फार्मो की अहम भूमिका होने पर हाइड्रोपोनिक्स में उत्पादकों की दिलचस्पी बढ़ी है।

हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली के लाभ

1. हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली में फसलें बंजर मिट्टी, खारी मिट्टी या उस भूमि पर उगाई जा सकती हैं जहां परंपरागत रूप से खेती संभव नहीं है, क्योंकि इसके लिए मिट्टी की कोई आवश्यकता नहीं होती है।

2. ताजी सब्जियों की आपूर्ति : 1940 के दशक में, वेक आइलैंड में सैनिकों के लिए ताजी सब्जियों की आपूर्ति के लिए हाइड्रोपोनिक्स का सफलतापूर्वक उपयोग किया गया था, जो पैन अमेरिकन एयरलाइंस के लिए एक ईंधन भरने वाला स्टॉप था। साथ ही, नासा द्वारा हाइड्रोपोनिक्स को अंतरिक्ष में (जहां मिट्टी नहीं है) अंतरिक्ष यात्रियों के लिए खाद्य पदार्थ उगाने के लिए भविष्य की खेती माना गया है।

3. जगह का सर्वोत्तम उपयोग : हाइड्रोपोनिक्स में, पौधों को एक प्रणाली में उगाया जाता है, स्थान की उपलब्धता के अनुसार प्रणाली का आकार और क्षेत्र रखा जा सकता है। इस प्रणाली में पौधों की जड़ें अश्वक्सीजन युक्त पोषक तत्वों के घोल से भरे एक टैंक में डूब जाती हैं और सीधे खनिजों के संपर्क में रहती हैं।

4. जलवायु नियंत्रण : हाइड्रोपोनिक प्रणाली में जलवायु कारकों जैसे तापमान, आर्द्रता, वायु और प्रकाश की तीव्रता को आवश्यकता के अनुसार नियंत्रित किया जा सकता है, परिणामस्वरूप पौधों से संभावित उपज ली जा सकती है। इस प्रणाली में राइजोस्फीयर व माइक्रॉक्लाइमेट को भी जरूरत के हिसाब से नियंत्रित किया जा सकता है ताकि पीएच, ईसी और पोषक तत्वों की मात्रा को उपयुक्त स्तर पर रखा जा सके, जिससे गुणवत्ता और उत्पादन दोनों मे बढोतरी होती है। हाइड्रोपोनिक्स में मौसम की परवाह किए बिना सब्जियां साल भर उगाई जा सकती हैं और किसान ऑफ सीजन के दौरान सब्जियां बेचकर अधिकतम लाभ कमा सकते हैं।

5. पानी कि बचत : हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली में पानी के पुनर्चक्रण के कारण खेतों में उगाए जाने वाले पौधों की तुलना में हाइड्रोपोनिक्स में उगाए गए पौधों की पानी की आवश्यकता 80–90 प्रतिशत कम होती है। इस प्रणाली में पौधे आवश्यक पानी ग्रहण करेंगे, जबकि बचे पानी को पकड़कर सिस्टम में वापस कर दिया जाएगा। इसके अलावा अंतः स्रवण के रूप में पानी की कोई हानि नहीं होगी, यहां तक कि नियंत्रित जलवायु परिस्थितियों के कारण वाष्पीकरण के रूप में पानी की हानि न्यूनतम होगी।

6. पोषक तत्वों का कुशल उपयोग : पोषक तत्वों की मांग फसल वृद्धि के साथ बदलती रहती है, हाइड्रोपोनिक्स में बढ़ते पौधों की आवश्यकता के अनुसार विशिष्ट पोषक तत्वों की सटीक मात्रा को लागू करने का प्रावधान है, क्योंकि पोषक तत्वों का 100 प्रतिशत नियंत्रण होता है जिसकी पौधों को आवश्यकता होती है। बुआई से पहले, उत्पादक यह देख सकते हैं कि पौधों को किस चीज की जरूरत है और पोषक तत्वों की विशिष्ट मात्रा की जरूरत है। विशेष चरणों में और उन्हें तदनुसार पानी के साथ मिलाएं, पानी में घुलनशील पोषक तत्व फीडर टैंक में संरक्षित होते हैं, इसलिए मिट्टी प्रणाली के विपरीत पोषक तत्वों का कोई नुकसान या परिवर्तन नहीं होता है।

7. घोल के रासायनिक गुणों पर नियंत्रण : रासायनिक गुणों में विशेष रूप से रूटिंग मीडिया के पीएच और ईसी का अत्यधिक महत्व है क्योंकि ये कारक पोषक तत्वों की उपलब्धता और अवशोषण को नियंत्रित करते हैं, हाइड्रोपोनिक्स में सभी खनिज और पोषक तत्व समाधान, पीएच और ईसी में बने रहते है। समाधान को मिट्टी की तुलना में अधिक आसानी से मापा और समायोजित किया जा सकता है जो पौधों के लिए इष्टतम पोषक तत्वों को सुनिश्चित करता है।

8. अधिक उपज और तेजी से विकास : हाइड्रोपोनिक्स में, बढ़ते पौधों की आवश्यकता के अनुसार पूरे माइक्रॉक्लाइमेट को विनियमित किया जा सकता है या पौधे अनुकूल तापमान, आर्द्रता, प्रकाश, पोषक तत्वों और वायु संरचना का निरीक्षण करने में सक्षम होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप की शारीरिक प्रक्रियाओं में कोई तनाव नहीं होता है। इस प्रणाली में पौधों को आदर्श परिस्थितियों में उजागर किया जाता है, जहां पोषक तत्व इष्टतम मात्रा में प्रदान किए जाते हैं और जड़ तंत्र के सीधे संपर्क में आते हैं, ताकि पौधे अब मिट्टी में पोषक तत्वों की तलाश में ऊर्जा बर्बाद न करें। इसके बजाय, वे अपना सारा ध्यान फलों को उगाने और पैदा करने में लगाते हैं।

9. खरपतवार मुक्त खेती : खरपतवार खेती के साथ एक बड़ी समस्या है, निराई से खेती की लागत बढ़ जाती है और फसल की उपज और उसकी गुणवत्ता भी कम हो जाती है क्योंकि खरपतवार नमी, प्रकाश और पोषक तत्वों के मामले में फसल के पौधौ से प्रतिस्पर्धा करते हैं। खरपतवार के बीजों में बार–बार अंकुरण की आदत होती है तथा यह मिट्टी में लम्बे समय तक बने रहते है, इसलिए खरपतवारों का उन्मूलन आसान कार्य नहीं है, जबकि हाइड्रोपोनिक्स में कोई भी खरपतवार नहीं उग सकता है क्योंकि खरपतवार ज्यादातर मिट्टी से जुड़े होते हैं। हाइड्रोपोनिक प्रणाली में मिट्टी के साथ–साथ खरपतवार की सभी परेशानियां दूर हो जाएंगी।

10 . कीट और रोग कम : पौधों को मिट्टी से पैदा होने वाले कीटों जैसे पक्षी, गोफर, ग्राउंडहॉग और फ्यूजेरियम, पाइथियम और राइजोक्टोनिया प्रजाति जैसे रोग के प्रति कम संवेदनशील बनाने में मदद मिलती है। । कीटनाशक और शाकनाशियों का कम उपयोग क्योंकि आप मिट्टी का उपयोग नहीं कर रहे हैं और जबकि खरपतवार, कीट और पौधों की बीमारियाँ बहुत कम हो गई हैं, वहाँ कम रसायनों का उपयोग किया जाता है। यह आपको स्वच्छ और स्वस्थ खाद्य पदार्थ उगाने में मदद करता है।

11. श्रम और समय की बचत : जुताई, और सिंचाई पर कम खर्च करने के अलावा खरपतवारों और कीटों को धूमिल करने से, आपका बहुत समय बच जाता है क्योंकि हाइड्रोपोनिक्स में पौधों की वृद्धि अधिक होती है। जब कृषि को अधिक प्रौद्योगिकी आधारित बनाने की योजना है।

सीमाएं

1. समय की प्रतिबद्धता : जीवन में किसी भी सार्थक चीज की तरह, कड़ी मेहनत और जिम्मेदार रवैया संतोषजनक उपज देता है। हालांकि, मृदा जनित समकक्षों में, पौधों को दिनों और हफ्तों के लिए अपने दम पर छोड़ा जा सकता है, और वे अभी भी थोड़े समय के लिए जीवित रहते हैं। अगर कुछ संतुलन नही हो रहा है तो प्रकृति और मिट्टी को विनियमित करने में मदद करेगी। हाइड्रोपोनिक्स में ऐसा नही है। उचित देखभाल और पर्याप्त ज्ञान के बिना पौधे अधिक तेज़ी से मरेंगे। याद रखें कि आपके पौधे अपने अस्तित्व के लिए आप पर निर्भर हैं। आपको अपने पौधों की अच्छे से देखभाल करनी चाहिए और प्रारंभिक स्थापना पर सिस्टम, फिर आप बाद में पूरी चीज को स्वचालित कर सकते हैं, लेकिन आपको अभी भी संचालन के अप्रत्याशित मुद्दों को मापने और रोकने और लगातार रखरखाव करने की आवश्यकता है।

2. अनुभव और तकनीकी ज्ञान

आप कई प्रकार के उपकरणों की एक प्रणाली चला रहे हैं, जिसके लिए उपयोग किए जाने वाले उपकरणों के लिए आवश्यक विशिष्ट विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है, आप कौन से पौधे उगा सकते हैं और कैसे वे मिट्टी रहित वातावरण में जीवित रह सकते हैं और पनप सकते हैं। इस मृदु वातावरण में सिस्टम और पौधों की विकास क्षमता को स्थापित करने में गलतियाँ आपकी पूरी प्रगति को बर्बाद कर देती हैं।

3. जैविक बहस

हाइड्रोपोनिक्स को जैविक के रूप में प्रमाणित किया जाना चाहिए या नही, इस बारे में कुछ गर्म तर्क दिए गए हैं। लोग सवाल कर रहे हैं कि क्या हाइड्रोपोनिकली उगाए जाने वाले पौधों को माइक्रोबायोम मिलेंगे क्योंकि वे मिट्टी में हैं। लेकिन दुनिया भर के लोगों ने दसियों वर्षों से हाइड्रोपोनिक पौधे सलाद, टमाटर, स्ट्रॉबेरी आदि उगाए हैं, खासकर ऑस्ट्रेलिया में। टोक्यो, नीदरलैंड और संयुक्त राज्य अमेरिका। उन्होंने लाखों लोगों के लिए भोजन उपलब्ध कराया है। आप जीवन में किसी भी चीज से पूर्णता की उम्मीद नहीं कर सकते। यहां तक कि मिट्टी उगाने के लिए भी हाइड्रोपोनिक्स की तुलना में कीटनाशकों, कीट आदि के अधिक जोखिम हैं। हाइड्रोपोनिक उत्पादकों के लिए सुझाए गए कुछ जैविक तरीके हैं। उदाहरण के लिए, कुछ उत्पादकों ने कोको कॉयर जैसे जैविक बढ़ते मीडिया का उपयोग करके और इसमें कीड़ा कास्टिंग जोड़कर पौधों के लिए माइक्रोबायोम प्रदान किया। प्राकृतिक रूप से निमित पोषक तत्वों का आमतौर पर उपयोग किया जाता है जैसे हड्डियाँ का चूरा, कपास के बीज की खली, लरजका, नीम खली, आदि। जैविक उत्पाद के मुद्दे पर इस बहस के लिए अभी और शीघ्र ही शोध किया जाएगा और हम तब हमें अपने जवाब जानेंगे।

4. पानी और बिजली के जोखिम

एक हाइड्रोपोनिक प्रणाली में, आप ज्यादातर पानी और बिजली का उपयोग करते हैं। पास के पानी के संयोजन में बिजली से सावधान रहें। जल प्रणालियों और बिजली के उपकरणों के साथ काम करते समय हमेशा सुरक्षा को प्राथमिकता दें, विशेष रूप से वाणिज्यिक ग्रीनहाउस में।

5. सिस्टम की विफलता का खतरा

आप पूरे सिस्टम को प्रबंधित करने के लिए बिजली का उपयोग कर रहे हैं। तो मान लीजिए कि आप बिजली कटौती के लिए प्रारंभिक कार्रवाई नही करते हैं, सिस्टम तुरंत काम करना बंद कर देगा, और पौधे जल्दी सूख सकते हैं और कई घंटों में मर जाएंगे। इसलिए, एक बैकअप शक्ति स्रोत और योजना की हमेशा योजना बनाई जानी चाहिए, विशेष रूप से बड़े पैमाने की प्रणालियों के लिए।

6. प्रारंभिक व्यय

आप अपनी पहली स्थापना के लिए उपकरण खरीदने के लिए एक सौ से कुछ सौ डॉलर (आपके बगीचे के पैमाने के आधार पर खर्च करने के लिए निश्चित हैं। आप जो भी सिस्टम बनाते हैं, आपको कंटेनर, रोशनी, एक पंप टाइमर, बढ़ते मीडिया और पोषक तत्वों की आवश्यकता होगी)। एक बार सिस्टम स्थापित हो जाने के बाद, लागत केवल पोषक तत्वों और बिजली (पानी की व्यवस्था को चालू रखने और प्रकाश व्यवस्था को बनाए रखने के लिए) तक कम हो जाएगी।

7. प्रति निवेश लंबा रिटर्न

यदि आप कृषि स्टार्ट–अप पर समाचारों का अनुसरण करते हैं, तो आप जानते होंगे कि हाल ही में कुछ नए इनडोर हाइड्रोपोनिक व्यवसाय शुरू हुए हैं। यह कृषि क्षेत्र और साथ ही हाइड्रोपोनिक्स के विकास के लिए भी अच्छी बात है। हालांकि, अभी भी बड़े पैमाने पर हाइड्रोपोनिक्स की साथ शुरुआत करते समय व्यावसायिक उत्पादकों को कुछ बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। यह मुख्य रूप से उच्च प्रारंभिक खर्च और लंबे अनिश्चित निवेश पर वापसी कि स्थिति के कारण है। निवेश के लिए आग्रह करने के लिए एक स्पष्ट लाभदायक योजना का विवरण देना आसान नही है, जबकि कई अन्य आकर्षक हाई–टेक क्षेत्र भी हैं जो फंडिंग के लिए काफी आशाजनक लगते हैं

8. रोग और कीट तेजी से फैल सकते हैं

आप पानी का उपयोग करके एक बंद व्यवस्था में पौधे उगा रहे हैं। पौधों के संक्रमण या कीटों के मामले में। वे एक ही पोषक जलाशय पर पौधों को तेजी से बढ़ा सकते हैं। ज्यादातर मामलों में, घरेलू उत्पादकों की एक छोटी प्रणाली में रोग और कीट इतनी अधिक समस्या नही हैं। इसलिए अगर आप नौसिखिए हैं तो इन मुद्दों पर ज्यादा ध्यान न दें। यह केवल बड़े हाइड्रोपोनिक ग्रीनहाउस के लिए जटिल है। इसलिए बेहतर होगा कि पहले से ही एक अच्छी रोग प्रबंधन योजना बना लें। उदाहरण के लिए, केवल स्वच्छ रोग–मुक्त जल स्रोतों और बढ़ती सामग्री का उपयोग करें, समय–समय पर सिस्टम की जाँच करें, आदि। यदि बीमारियाँ होती हैं, तो आपको संक्रमित पानी, पोषक तत्व और पूरे सिस्टम को तेजी से कीटाणुरहित करने की आवश्यकता होती है। जीवन में किसी भी अन्य चीज की तरह, यहां हाइड्रोपोनिक्स के डाउनसाइड्स हैं। लेकिन आप उनमें से अधिकांश को केवल कुछ योजना और अनुभव से दूर कर सकते हैं। हाइड्रोपोनिक्स इसकी पेशकश कर सकने वाले पेशेवरों को ध्यान में रखते हुए करने योग्य है।

***

आधुनिक तकनीक सें सब्जी पौध उत्पादन

महेश चौधरी एवं अनोप कुमारी
कृषि विज्ञान केन्द्र, अरनिया-श्रीमाधोपुर, सीकर-द्वितीय एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, मौलासर, नागौर

सब्जियां कृषकों के लिए आय का एक अच्छा स्त्रोत मानी जाती है। कम समय में तैयार होने के साथ ही खाद्यान्न फसलों की तुलना में अधिक उत्पादकता के कारण इनसें अच्छा मुनाफा मिलता है, यही कारण है कि शहरों के आस–पास रहने वालें अधिकतर किसान सब्जियां उगाना पसंद करते है। इन सबके बावजूद कृषकों को सब्जी उत्पादन में बहुत कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। समय पर गुणवत्तायुक्त पौध नही मिल पाने के कारण उचित आय नहीं मिल पाती है। अधिक उत्पादन एवं मुनाफे के लिए जरूरी है कि स्वस्थ, ओजस्वी एवं रोगमुक्त पौध समय पर उपलब्ध हो। कहा भी गया है कि 'सुबीजम सुक्षेत्रे जायते सम्पाद्यते' अर्थात् अच्छे बीज को अगर उपजाऊ भूमि में लगाया जाए तो अधिक उपज प्राप्त होती है। बीज से तात्पर्य सभी तरह की पौध रोपण सामग्री से है। किसान अधिक आय अर्जित करने के लिए बाजार सें सब्जियों के संकर बीज तो खरीद लेता है जिनका मूल्य भी अधिक होता है परतुं स्वस्थ पौध तैयार नही कर पाने के कारण अच्छा उत्पादन नही ले पाता जिस कारण उसें नुकसान उठाना पडता है।

आमदनी का बेहतर जरिया है स्वस्थ पौध उत्पादन

शहरी क्षेत्र के आस–पास खेती करने के साथ ही गृहवाटिका तैयार करने के लिए भी गुणवत्तायुक्त पौध की मांग सालभर बनी रहती है। जो व्यक्ति पौध उत्पादन व्यवसाय सें जुड़े है वो इससें अच्छा मुनाफा कमा लेते है, इसी वजह सें पौध उत्पादन अब एक व्यवसाय के रूप में स्थापित हो चुका है। कृषक स्वयं के स्तर पर पौधशाला तैयार करके खेती की लागत में तो कमी कर ही सकता है साथ ही समय पर पौध का रोपण करके अच्छा लाभ भी ले सकता है। पौधशाला वह स्थान है जहाँ सघन (घने) रूप से बीज उगाकर पौध तैयार की जाती है। जब यह 3–5 सप्ताह (स्वभाव के अनुसार) की हो जाती है तो इसे मुख्य खेत में रोपण हेतु तैयार समझी जाती है। लौकी, तुरई, करेला, मटर, भिंडी, लोबिया इत्यादि बड़े बीज वाली सब्जियों की बुवाई तो सीधे ही खेत में कर देते है परंतु टमाटर, बैंगन, मिर्च, प्याज, गोभी वर्गीय सब्जियां इत्यादि महिन बीज वाली सब्जियों को सर्वप्रथम पौधशाला में तैयार करके रोपण किया जाता है। उचित देखभाल के अभाव में कई बार पौधशाला में बीजों का जमाव सही नही हो पाता साथ ही जमाव के बाद पौधों के विकास में कमी, कीट एवं बीमारियों का अधिक प्रकोप इत्यादि समस्यायें आ जाती है। अतः जरूरी हो जाता है कि पौधशाला वैज्ञानिक तरीके सें तैयार की जाए जिसमें स्थान का चुनाव, मृदा शोधन, क्यारियां तैयार करना, किस्मों का चुनाव, बीज उपचार व बुवाई का तरीका, पोषक तत्त्व प्रबंधन एवं पौध सुरक्षा इत्यादि को ध्यान में रखकर स्वस्थ व ओजस्वी पौध तैयार हो सके।

पौधशाला में पौध उगाने के लाभ

- महीन बीजों को खेत में समान रूप से वितरण करना बहुत कठिन होता है जिससें अधिक बीज दर की आवश्यकता होती है जोकि लागत मूल्य को प्रभावित करती है।
- विपरीत वातावरणीय कारकों सें कम जगह होने सें आसानी सें रक्षा की जा सकती है जबकि खुलें खेत में यह संभव नही हो पाता है।
- मुख्य खेत में रोपण हेतु कम स्थान पर ही अधिक पौधे तैयार कर सकते है जिससें भूमि, बीज एवं समय की बचत तो होती ही है साथ ही सीधी बुवाई की तुलना में लाभ भी अधिक मिलता है।
- इस स्थान पर पौधों की सार–संभाल बराबर की जा सकती है जिससें पौध स्वस्थ व ओजस्वी प्राप्त होती है।
- पौधशाला में बीजों की बुवाई के कारण औसतन एक महिना मुख्य खेत की तैयारी के लिए अधिक मिल जाता है जिससें श्रम व व्यय कम लगता है।
- प्रति इकाई क्षेत्रफल में पौधों की संख्या शत–प्रतिशत सुनिश्चित की सकती है जिससें पैदावार में वृद्धि होती है।

पौधशाला के लिए स्थान का चुनाव

स्वस्थ एवं निरोगी पौध तैयार करने के लिए आवश्यक है कि स्थान ऐसा हो जहाँ दिनभर पर्याप्त मात्रा में सूर्य का प्रकाश रहता हो व जमीन थोड़ी ऊँचाई पर हो जहां जल भराव की समस्या नही हो। पौधशाला के लिए बलुई दोमट मृदा जिसका पी.एच. मान 6.5–7.5 के मध्य हो उत्तम रहता है। यह स्थान घर अथवा कार्यालय सें अधिक दूरी पर भी स्थित नही होना चाहिए जिससें देखरेख में कोई समस्या नही आए। सिंचाई हेतु पानी का समुचित प्रबंधन होना भी आवश्यक है।

मृदा का शोधन

यदि भूमि का शोधन नहीं किया जाता है तो मृदा में उपस्थित फफूंद, जीवाणु, सूत्रकृमि इत्यादि पौध की गुणवत्ता को प्रभावित है। पौधशाला में आर्द्रगलन (डेम्पिंग ऑफ) के कारण पौध की मृत्युदर भी बहुत अधिक रहती है अतः इन सब से बचने के लिए भूमि का शोधन कर लेना चाहिए। इसकी कई विधियां प्रचलित है जैसे मृदा सौर्यीकरण, रसायनों द्वारा, फफूंदनाशकों सें, जैव नियंत्रको द्वारा। इन सभी में मृदा सौर्यीकरण विधि सस्ती एवं लाभप्रद होती है, इस हेतु मई–जून में जब तापमान 40 डिग्री सेल्सियस सें अधिक पहुंच जाता है तब मृदा सौर्यीकरण का कार्य प्रारम्भ करना चाहिए। सर्वप्रथम इसमें मृदा को हल्का नम कर कर लेते है फिर 200 गेज की प्लास्टिक पारदर्शी चादर से ढक देते है। प्लास्टिक के किनारों को मिट्टी से सही

ढंग से दबा दिया जाता है जिससें हवा अंदर प्रवेश ना कर सके। इस प्रक्रिया से प्लास्टिक चादर के अंदर का तापमान बढ़ जाता है, जिससे मिट्टी में उपस्थित हानिकारक कीट, फफूंद के साथ ही कुछ खरपतवारों के बीज भी नष्ट हो जाते है। 5–6 सप्ताह बाद प्लास्टिक चादर हटाकर क्यारियों में बीज की बुवाई प्रारम्भ कर देनी चाहिए।

बीज की मात्रा व पौधशाला का आकार

प्रति इकाई क्षेत्रफल में पौध रोपण हेतु निश्चित बीज दर की आवश्यकता होती है। क्यारियों में अधिक बीज डालने पर पौधे कमजोर व बीमारी ग्रसित हो जाते है अत: आवश्यक है कि क्यारी के आकार के हिसाब सें ही उसमें बीज डाला जाए। तालिका 1 में दर्शायी गई बीज की मात्रा व आवश्यक क्षेत्रफल के अनुसार ही प्रयोग करें जिससें पौध के विकास हेतु उचित स्थान मिल सके।

पौधशाला हेतु क्यारियाँ तैयार करना

अच्छी तरह से तैयार भूमि जिसमें पर्याप्त मात्रा में कार्बनिक पदार्थ मौजुद हो में छोटी–छोटी क्यारियां तैयार कर ले। क्यारियाँ जमीन से 15–20 सेमी. ऊँची उठी हुई तैयार करे जिससें अनावश्यक पानी बहकर नीचें चला जाए। क्यारियों की चौड़ाई 1 मीटर से अधिक नहीं होनी चाहिए, जिससे सिंचाई, खरपतवार हटाने एवं पौध संरक्षण इत्यादि कार्य में सुविधा रहे व लम्बाई सुविधानुसार रख सकते है। क्यारियों की लम्बाई उत्तर–दक्षिण दिशा में रखें व चौड़ाई पूर्व–पश्चिम की और रखे जिससें पौधों को पर्याप्त प्रकाश उपलब्ध होता रहने सें बिमारियों का प्रकोप कम सें कम हो। प्रत्येक दो क्यारियों के बीच में 0.30–0.40 सेमी. जगह छोड़ देनी चाहिए, जिससे सिंचाई, खरपतवार नियंत्रण कार्य व इनकी देखरेख में आसानी रहे।

बीजोपचार एवं बुवाई

बुवाई सें पूर्व बीजों को किसी फफूंननाशी दवा जैसे कैप्टॉन या थाइरम (2 ग्राम/किग्रा बीज) अथवा ट्राइकोडर्मा मित्र फफूंदनाशक (4–6 ग्राम/किग्रा) से उपचारित कर लेना चाहिए। बीजों की बुवाई दो तरीको सें छिटकवा व कतार विधि सें करते है, परन्तु बुवाई की कतार विधि सर्वोत्तम मानी गई है। इसमें बीजों का वितरण एक–सा रहता व निराई–गुड़ाई में भी आसानी रहती है। स्वस्थ पौध हेतु क्यारी की चौडाई के समांतर (पूर्व–पश्चिम) में 4–5 सेमी. की दूरी पर कतारें बनाकर उनमें बीजों की बुवाई करें। बारीक बीजों को रेत में मिलाकर कतारों में डालते है जिससें आवश्यकता सें अधिक बीज नही गिरें। बीजों की गहराई उनके आकार पर निर्भर करता है सामान्यत: 0.5 सेमी. की गहराई पर बीज डालते है। डाले गए बीजों को ढकने के लिए कम्पोस्ट, मृदा व रेत का मिश्रण (2:1:1) उतम माना गया है।

बीज बुवाई उपरांत क्यारियों को ढकना

बीजों के अच्छे जमाव के साथ ही उनकों तेज धूप, वर्षा एवं पशु–पक्षियों सें बचाने के लिए पलवार का प्रयोग फायदेमंद रहता है, इससें नमी का संरक्षण तो होता ही है साथ ही तापमान भी नियंत्रित रहता है। पलवार हेतु बुवाई की आंरम्भिक अवस्था में स्थानीय स्तर पर उपलब्ध सूखी घास–फूस का उपयोग किया जा सकता है। क्यारियों में जितना महत्त्वपूर्ण पलवार बिछाना है उतना ही उसकों हटाना भी है यदि समय पर यह कार्य नही किया जाए तो पौध को बहुत नुकसान पहुचता है। पलवार हटाने का कार्य जब 50 प्रतिशत बीजों में जमीन सें ऊपर परन्तु पलवार के नीचे सफेद व छोटा धागानुमा आकार निकलता दिखे प्रारम्भ कर दे, अन्यथा मूलांकुर बड़ा होने पर पौधा कमजोर होकर जड़ के पास से ही गल कर गिरने लगते हैं।

सिंचाई व्यवस्था

सिंचाई की अवधि मौसम पर निर्भर करती है। बीजों की बुवाई के प्रारम्भिक अवस्था में हल्कि सिंचाई सुबह व शाम को झारे की सहायता सें करनी चाहिए जिससें अंकुरण के लिए पर्याप्त नमी बनी रहे। बारिश के दिनों में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। पौधशाला में अधिक सिंचाई से आर्द्रगलन (डेम्पिंग ऑफ) का प्रकोप हो जाता है। आजकल

तालिका 1. प्रति हैक्टर क्षेत्र में रोपण हेतु आवश्यक बीज की मात्रा व उगाने के लिए क्षेत्रफल

क्र.सं.	सब्जी का नाम	बीज दर (प्रति है. ग्राम में)	आवश्यक क्षेत्रफल (वर्ग मीटर में)
1.	टमाटर (संकर)	150–200	75–100
2.	टमाटर (मुक्त परागित)	250–300	100–125
3.	मिर्च (संकर)	300–350	75–100
4.	मिर्च (मुक्त परागित)	500–600	100–150
5.	बैंगन (संकर)	200–250	75–100
6.	बैंगन (मुक्त परागित)	500–600	75–100
7.	शिमला मिर्च	400–500	100–150
8.	प्याज	8000–10000	400–500
9.	पत्तागोभी	450–500	100–150
10.	गांठ गोभी	700–750	150–200
11.	फूलगोभी (अगेती)	700	100–150
12.	फूलगोभी (मध्य मौसमी)	400–500	150–200

व्यवसायिक पौधशाला उत्पादन में बारीक बौछार वाले स्प्रिकलर का उपयोग भी किया जाता है इससें पानी हल्कि बौछार के रूप में क्यारियों में एकसमान लगता रहता है।

खरपतवार प्रबंधन
सब्जियों के बीजों के अंकुरण के साथ ही उनके आस–पास विभिन्न प्रकार के खरपतवार भी उग आते है जो कि पौध के साथ पोषक तत्वों, स्थान, नमी, वायु आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करते रहते है। अतः स्वस्थ पौध उत्पादन हेतु इनको समय पर निकालना आवश्यक होता है। पौधशाला यदि कम जगह में ही है तो यह कार्य हाथों द्वारा कर लेना चाहिए। व्यवसायिक स्तर पर पौधशाला में खरपतवारनाशी दवाओं जैसे–स्टाम्प (पेन्डीमीथेलीन) का उपयोग सिफारिश के अनुसार किया जा सकता है।

प्लग ट्रे में सब्जियों का पौध उत्पादन
आजकल संरक्षित संरचनाओं के माध्यम सें प्लास्टिक ट्रे जिन्हे प्लग ट्रे भी कहा जाता है में पौध का उत्पादन किया जा सकता है। हरितगृह, कीट अवरोधी जाल, लो टनल, छायादार जाली आदि इस हेतु उपयोग में लाए जा सकते है, इनसें स्वस्थ पौध तैयार करने में मदद तो मिलती ही है साथ ही वातावरण की विपरित परिस्थितियों में पौध उत्पादन संभव हो सकता है।

प्लग–ट्रे द्वारा करे गुणवत्तायुक्त पौध का उत्पादन
प्लग–ट्रे में पौध उत्पादन के लाभ

- बीजों के समुचित रूप से जमाव के कारण कम बीज की आवश्यकता।
- विपरीत वातावरणीय दशाओ में भी पौधा उगाना सम्भव ।
- पौधों की बढ़वार के लिए पर्याप्त स्थान।
- मृदाजनित बीमारियों एवं निमेटोड की समस्या सें बचाव।
- प्रत्येक पौधे के लिए समान व अलग–अलग जगह।
- कम जगह में ही ज्यादा पौध तैयार करना संभव।
- पौधों के रखरखाव या स्थानांतरण मे आसानी।
- पूर्णतया विषाणु मुक्त पौध उगाना संभव।
- कददूवर्गीय फसलों का भी पौध उत्पादन संभव।

प्लग ट्रे के बारें में जानकारी लेते नवयुवक

पौध उगाने हेतु मृदा रहित माध्यम
प्लग ट्रे में पौध तैयार करने हेतु मृदा रहित माध्यम का प्रयोग किया जाता है। यह अकेला या विभिन्न पदार्थो (प्राकृतिक या कृत्रिम) का सम्मिश्रण हो सकता है। एक आदर्श प्रवर्धन माध्यम में अच्छी जल धारण क्षमता तथा उपयुक्त जलनिकास होना चाहिए इसका पी.एच. 5.5–7.0 के बीच होना चाहिए। मुख्य रूप से प्लग ट्रे को भरने के लिए तीन तरह के अवयव होते हैं :

- **नारियल का बुरादा (कोकोपीट) :** यह नारियल के कवच के ऊपर उपस्थित रेशों से तैयार किया जाता है। इसका सबसे ज्यादा प्रयोग किया है, इसमें पानी सोखने की क्षमता अधिक रहती है।
- **वर्मीकुलाइट :** यह अभ्रक युक्त खनिज होता है जो गर्म करने पर फैलता है। यह वजन में हल्का, उदासीन तथा पानी में अघुलनशील होता है इसकी जलघारण क्षमता अत्यधिक होती है। हल्का होने के कारण यह सहारा नहीं दे पाता इसलिये इसको अन्य माध्यमों के साथ मिलाकर इस्तेमाल किया जाता है।
- **परलाईट :** यह स्लेटी सफेद रंग का सिलिका युक्त पदार्थ वोल्केनिक उत्पत्ति की चट्टानों से निकले पदार्थ को अत्यधिक तापमान पर गर्म करके तैयार किया जाता है। यह हल्के भूरे रंग का होता है एवं इसका पी.एच. मान 7–7.5 के बीच होता है।

प्लग ट्रे भरने का तरीका
प्लग ट्रे भरने हेतु उपरोक्त तीनों अवयव कोकोपीट, वर्मीकुलाईट एवं परलाईट का उपयोग आयतन के आधार पर 3:1:1 या 2:1:1 के अनुपात में किया जाता है ताकि मिश्रण ना तो अधिक गीला हो और ना ही अधिक सूखा हो। तीनों पदार्थो को किसी पात्र में डालकर हल्के से पानी का छिड़काव कर मिश्रण तैयार कर लिया जाता है। वर्मीकुलाईट एवं परलाईट उपलब्ध न होने की स्थिती में ट्रे भरने के लिए कोकोपिट व वर्मीकॅम्पोस्ट खाद 4:1 के साथ भरी जा सकती है। ट्रे में ऊपर बताए मिश्रण को कटोरियों में भर देते है, एवं अंगूठे से मिश्रण को दबा देते है, जिससे कटोरी का 3/4 भाग मिश्रण से पूरी तरह भरा रहे, यह अवस्था बीज डालने के लिए उपयुक्त है।

प्लग ट्रे में बीजों की बुवाई का तरीका
प्लग ट्रे जिनका वजन लगभग 50–60 ग्राम होता है में 48 से 98 कटोरियां होती है, जिनमें इसी संख्या में पौध तैयार की जा सकती है। ट्रे का चयन उगाई जाने वाली फसल पर निर्भर करता है, आमतौर पर 98 कटोरियां वाली ट्रे का उपयोग मिर्च, टमाटर, बैंगन, गोभी वर्गीय सब्जियां इत्यादि के लिए एवं 48 कटोरियां वाली ट्रे का उपयोग खीरा, ककड़ी, तरबूज, खरबूज, कद्दू के लिए किया जाता है। प्रत्येक केबिटी में एक एक बीज डाल दिया जाता है। बीज डालने के पश्चात् कटोरी के शेष भाग (¼) को मिश्रण डालकर दबा दिया जाता है। बीज डालने के पश्चात् झारे या फोगर द्वारा समान मात्रा में पानी का छिड़काव कर देते है। ट्रे को बीज बुवाई के पश्चात् 2–3 दिनों तक पॉलिथिन से ढक देते है जिससें बीजों का जमाव उत्तम व शीघ्र होता है। प्रो–ट्रे को पुनः उपयोग करने से पूर्व यह आवश्यक होता है कि इन्हें अच्छी तरह धोकर फफूंदनाशी से निसंक्रमित कर ले। ट्रे के पेंदे में छेद होने से नमी पर नियंत्रण रहता है एवं समान अतंराल की ट्रे के केबिटी में पौधों का समान विकास होता है ट्रे का उपयोग 5–6 बार किया जा सकता है।

पोषक तत्व प्रबंधन
नर्सरी तैयार करते समय पोषक तत्व देना बहुत ही आवश्यक है। नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश (19:19:19) को 4 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर बुवाई के 15 दिन बाद छिड़काव करें। इस प्रकार बने घोल का छिड़काव प्रत्येक सप्ताह या दस दिन के अन्तराल पर करने से पौधों में पोषक तत्व की मात्रा की पूर्ति होती रहती हैं तथा नर्सरी में पौधें स्वस्थ रहते है। इससे माध्यम के चारों ओर अच्छा जड़–तंत्र विकसित हो जाता है, जोकि एक अच्छी पौध की ओज एवं गुणवत्ता को दर्शाता है।

प्लास्टिक ट्रे से पौध निकालने का ढंग
पौध को प्लास्टिक ट्रे से बाहर निकालने के लिए नमी का होना बहुत आवश्यक है, सूखी अवस्था में पौध को ट्रे से निकालने में असुविधा होती है, साथ ही यदि नमी बहुत कम होगी तो जड़ो के चारो ओर का मिश्रण बिखर जाता है जिसके परिणामस्वरूप पौधे थोडे समय बाद मुरझा जाते है। अतः पौध निकालने के लगभग 5–6 घण्टे पहले प्लास्टिक–ट्रे में हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। पौध निकालते समय अंगूठे और उगंली का प्रयोग करते हुए तने को पकड़कर आराम से बाहर निकालें। एक पौध में सभी आवश्यक जड़ें गोलाकार की शक्ल में दिखाई देती है। इन जड़ों को सुरक्षित रखना बहुत आवश्यक है।

कद्दूवर्गीय सब्जियों को रोगों से बचाने के उपाय

दिनेश चन्द, ज्योति झिरवाल एवं राजेंद्र कुमार शर्मा
कृषि विश्वविधालय, जोधपुर

कुकुरबिटेसी परिवार के अंतर्गत विभिन्न प्रकार की सब्जियों को शामिल किया गया है जिनमें लौकी, खीरा, कद्दू, तरबूज, खरबूज, टिण्डा, पेठा, ककड़ी, और तोरई इत्यादि सब्जियाँ शामिल है। कद्दूवर्गीय सब्जियों की पूरे भारत में बड़े स्तर पर खेती की जाती है। इन सब्जियों की खेती अधिकतर गर्मियों तथा खरीफ मौसम के अंतर्गत की जाती है। कद्दूवर्गीय सब्जियों का हिस्सा भारत में कुल सब्जी उत्पादन का 6–8 प्रतिशत तथा उत्पादकता लगभग 40–45 टन प्रति हेक्टेयर है। मौसम के उतार चढ़ाव जैसे उच्च आर्द्रता का होना, नमी एवं पानी की अधिकता या कमी के कारण कद्दूवर्गीय सब्जियों में विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते है जिनके कारण पौधे अपनी वृद्धि ठीक ढंग से नहीं कर पाते हैं और फिर धीरे धीरे पौधे नष्ट होना प्रारंभ हो जाते है।

कद्दू वर्गीय परिवार की सब्जियों को प्रभावित करने वाले रोग निम्न है –

1. मृदुरोमिल आसिता रोग

प्रभावित पौधे : लौकी, कद्दू, पेठा, ककड़ी और खरबूजा आदि।

मृदुरोमिल आसिता को कोमल फफूंदी अर्थात डाउनी मिल्ड्यू के नाम से भी जाना जाता है। यह कद्दू वर्गीय सब्जियों को अधिक नुकसान पहुंचाने वाला कवक जनित रोग है जो स्यूडोपेरोनोस्पोरा क्यूबेंसिस रोगजनक के कारण पौधों पर फैलता है। यह रोग पौधे को सभी अवस्था में प्रभावित करता है। इस रोग के प्रारंभिक लक्षण पत्तियों की ऊपरी सतह पर धब्बों के रूप में दिखाई देने लगते हैं जिसके कारण पत्तियाँ पूरी तरह से पीले रंग की होकर गिरने लगती हैं। इस रोग से संक्रमित पौधों की वृद्धि ठीक प्रकार से नहीं हो पाती है जिसके कारण फल एवं फूल नहीं लग पाते है।

मृदुरोमिल आसिता रोग से बचने के उपाय

मृदुरोमिल आसिता रोग से कद्दू वर्गीय सब्जियों को निम्न तरीकों से बचाया जा सकता है –

- कैंची की सहायता से पौधों की छंटाई करें, ताकि उनके आस पास हवा का प्रवाह बना रहे।
- शुरूआती लक्षण दिखाई देने पर, संक्रमित हिस्से को पौधों से काट कर अलग कर दे।
- इस रोग से बचने के लिए एक चौथाई पानी और एक चम्मच बेकिंग सोडा का घोल बनाकर पौधों पर छिड़काव करे।
- इस रोग से पौधों को बचाने के लिए नीम तेल या जैविक कवकनाशियो का प्रयोग सबसे बढ़िया है।

2. चूर्णिल आसिता रोग

प्रभावित पौधे : कद्दू, लौकी, खीरा, तुरई, करेला इत्यादि।

चूर्णिल आसिता को पाउडरी मिल्ड्यू एवं खस्ता फफूंदी भी कहा जाता है। चूर्णिल आसिता एक कवक जनित रोग है जो कुकुरबिटेसी परिवार से संबंधित सभी फसलों को नुकसान पहुंचाता है। इस रोग से संक्रमित पौधों में नई वृद्धि का होना भी रुक जाता है। इस रोग के सर्वप्रथम लक्षण पौधों की निचली एवं ऊपरी दोनों पत्तियों की सतह पर सफेद चूर्ण जैसे धब्बों के रूप में पाए जाते हैं जो बाद में बड़े होकर ये धब्बे डंठल एवं तने की सतह पर भी फैल जाते हैं। इस रोग के प्रभाव से पौधों की पत्तियां भूरे या सफेद रंग की होकर सूख जाती हैं जिससे पौधा समय से पहले नष्ट हो जाता है।

चूर्णिल आसिता रोग से बचने के उपाय –

- इस रोग से बचाव हेतु रोग प्रतिरोधी किस्मों का चुनाव करे ।
- इस रोग से बचाव हेतु पौधों के लिए धूप एवं छायादार वाले स्थान का चुनाव करे ।
- इस रोग के लक्षण पौधों पर दिखाई देते ही संक्रमित भागों को काटकर अलग कर दे।
- इस रोग से बचाव हेतु गंधक युक्त या तांबा युक्त कवकनाशी का प्रयोग सबसे ज्यादा प्रभावकारी है।
- इस रोग के लक्षण दिखाई देने पर 7 से 10 दिनों के अंतराल पर जैविक और रासायनिक कवकनाशियो का छिड़काव करके इस बीमारी को 60–70 प्रतिशत तक रोका जा सकता है।

3. झुलसा रोग

प्रभावित पौधे : तरबूज, खीरा, खरबूज, पेठा आदि

झुलसा रोग मुख्य रूप कद्दू वर्गीय परिवार की सब्जियों को प्रभावित करता है। यह रोग एक कवक जनित बीमारी है, जो फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम कवक के द्वारा फैलायी जाती है। यह रोग सबसे पहले खेत में पुरानी या निचली पत्तियों पर पीलेपन के रूप में दिखाई देता है, जो आमतौर पर फूल आने वाली अवस्था के समय होता है। इस रोग के संक्रमण से पत्तियाँ मुरझाकर झड़ने लगती है एवं समय से पहले ही मर जाती है। इस रोग के लक्षण लगातार नई पत्तियों पर दिखाई देते रहते

है। यह कवक जनित रोग गर्म मौसम होने की स्थिती में पौधों को अधिक नुकसान पहुंचाता है।

झुलसा रोग से बचने के उपाय –

- रोग से बचाव हेतु रोग प्रतिरोधी किस्मों का चुनाव करें।
- झुलसा रोग से संक्रमित खेत में कद्दूवर्गीय सब्जियों को नहीं लगायें।
- दो से तीन वर्षीय फसल चक्र अपनाएं।
- नाइट्रोजन की अधिक मात्रा इस रोग के प्रति संवेदनशील होती है, इसलिए नाइट्रोजन युक्त उर्वरक की जगह जैविक खाद का उपयोग करें।

4. सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग

प्रभावित पौध सबसे अधिक प्रभावित खीरा, तरबूज, खरबूजा और लौकी।

पत्ती धब्बा रोग भी कद्दू वर्गीय फसलों की प्रमुख बीमारी है। यह कवक जनित रोग है, जो सरकोस्पोरा सिट्रुलिना रोगजनक के कारण पौधों पर फैलती है। इस रोग प्रारंभिक के लक्षण पानी से लथ–पथ धब्बों के रूप मे दिखाई देते हैं, जो धीरे–धीरे बड़े होकर 2–5 मिमी व्यास के कोणीय गोलाकार धब्बों में स्पष्ट दिखाई देते हैं। प्रारंभिक संक्रमण पौधे की निचली पत्तियों की सतह से शुरू होता है। यह रोग वायुमंडल में अधिक आर्द्रता एवं नमी होने वाली स्थिति सर्वाधिक फैलता है। उग्र अवस्था में संक्रमण होने पर धब्बे पूरी पत्ती की सतह पर फैल जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप पत्तियाँ समय से पहले ही गिरने लग जाती है

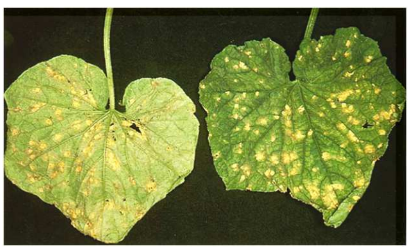

पत्ती धब्बा रोग से बचने के उपाय

- दो से तीन वर्षीय फसल चक्र अपनाएं।
- अधिक नमी होने पर शाम के समय सिंचाई नही करें
- संक्रमित पौधों पर जैविक फंगीसाइड, जैसे–नीम के तेल का छिड़काव करे।
- कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत का पानी मे घोल बनाकर 15 दिनों के अंतराल पर तीन बार छिड़काव करे।

5. चित्रवर्ण (मोजेक) रोग

प्रभावित पौधे खीरा, कद्दू, लौकी, लोबिया, आदि।

कद्दू वर्गीय सब्जियों में यह बीमारी विषाणु द्वारा फैलती है जिसकों फैलाने में माहूँ एवं घुन अधिक सहायक होते है। मोजेक रोग के लक्षण सबसे पहले पौधे की निचली पत्तियों पर दिखाई देते हैं उसके बाद में ऊपरी पत्तियों पर संक्रमण फैल जाता है ये धब्बे पीले रंग के प्रभामंडल से घिरे हुए रहते है। मोजेक रोग का संक्रमण अधिक होने पर सहपत्र पर लाल भूरे रंग के धब्बे बन जाते है जो बाद में अन्य नियत आकार लेकर नीचे की ओर मुड़ जाते है।

चित्रवर्ण (मोजेक) रोग से बचने के उपाय –

- खेत में उग रहे खरपतवार को कम करने के लिए पलवार का प्रयोग ताकि मोजेक रोग से फसलों को बचाया जा सके।
- कद्दू वर्गीय फसल को बचाने के लिए चारों ओर अन्य दूसरी फसल की बाड़ लगा दें ताकि माहूँ जैसे अन्य कीटों के द्वारा नुकसान न हो सके।
- रोग से बचाव हेतु रोग प्रतिरोधी किस्मों का चुनाव करे।

''अभिनव कृषि'' अंकवार प्रकाशित होने वाली विषय सामग्री

अंक	प्रकाशन माह	विषय–विशेषांक
1	जून	खरीफ फसल विशेषांक, खरीफ फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार, प्रबंधन, मृदा एवं जल संरक्षण
2	सितम्बर	रबी फसल विशेषांक, रबी फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार प्रबंधन, उन्नत कृषि उपकरण
3	दिसम्बर	सिंचाई प्रबंधन, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, जैविक खेती, समन्वित कृषि प्रणाली, आधुनिक डेयरी, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन
4	मार्च	जायद खेती, संरक्षित खेती, हाई–टेक बागवानी, फल–फूल, सब्जी उत्पादन, मृदा प्रबंधन, पशुपालन प्रबंधन, फल सब्जी परिरक्षण एवं खाद्य प्रसंस्करण

✱✱✱

भिण्डी की खेती

विशाल मीणा, हरीश वर्मा, इन्दिरा यादव एवं शशि कुमार बैरवा
कृषि विज्ञान केन्द्र, बूंदी एवं राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा

भिण्ड़ी जायद एवं खरीफ के मौसम में बोये जाने वाली एक लोकप्रिय सब्जी है। कच्चे फलों का उपयोग सब्जी बनाने में किया जाता है। इसमें विटामिन ए (88आई.यू.), विटामिन सी (13 मि.ग्राम), पोटेशियम (103 मि.ग्राम), सोडियम (6.9 मि.ग्राम), प्रोटीन (1.9 ग्राम) आदि प्रति 100 ग्राम ताजा फलों में पाये जाते है। भिण्ड़ी के फल में आयोडीन की भी प्रचुर मात्रा पाई जाती है। भिण्ड़ी के सूखे फल और छिलके का उपयोग कागज बनाने में किया जाता है। भिण्ड़ी एक वर्षीय सब्जी है जिसे उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। भिण्ड़ी के हरे फलों से करि व सूप बनाया जाता है। इसकी जड़ व तने का उपयोग गुड़ की तैयारी एवं गन्ने के रस को साफ करने में किया जाता है। भिण्ड़ी के फल गुर्दे की बीमारी ल्युकोरिया और सामान्य कमजोरी के मामलों में भी उपयोगी पाया गया है। भिण्ड़ी से प्राप्त प्रौटीन का उपयोग फॉर्टिफाइड़ भोज्य पदार्थ बनाने में किया जाता है। अधिक दूध उत्पादन के लिए पशुओं को भिण्डी का कुचला हुआ बीज भी खिलाया जाता है। भिण्ड़ी से रेशे (फाइबर) भी प्राप्त किया जाता है जिसका उपयोग जूट उद्योग एवं कपड़ा बनाने में किया जाता है। वैज्ञानिक तकनीकों से इसकी खेती करने पर अच्छा मुनाफा प्राप्त किया जा सकता है।

जलवायु

इसके लिए लम्बे समय तक गर्म मौसम की आवश्यकता पड़ती है। इसकी खेती मुख्यतः ग्रीश्म एवं वर्षा ऋतु में की जाती है। बीजों के अच्छे अंकुरण के लिए तापक्रम 25–30 डिग्री सेन्टीग्रेट से अधिक होना चाहिए। दिन का तापमान 42 डिग्री सेन्टीग्रेट से अधिक होने की दशा में फूल झड़ने लगते है। इसके लिए अधिक ठण्ड भी हानिकारक है।

मृदा एवं खेत की तैयारी

सामान्यता सभी प्रकार की मृदाओं में भिण्ड़ी की खेती की जा सकती है। लेकिन बलुई दोमट मृदा जिसका पी.एच. मान 6–7 कार्बनिक जीवाश्म से भरपूर वाली खेती के लिए उपयुक्त रहती है। जल निकास का उचित प्रबंधन होना चाहिए। भिण्ड़ी को अच्छे जल निकास वाली सभी मृदाओं में उगाया जा सकता है। इसकी खेती के लिए मृदा का पी.एच. मान 6.5 से 7.5 के मध्य उचित माना जाता हैं। खेत की गहरी जुताई करके पाटा लगाकर खेत को समतल कर लेना चाहिए। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा बाद की 2–3 जुताई देशी हल या हैरो चलाकर खेत को अच्छी तरह तैयार कर लेना चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा चलायें ताकि खेत में बिखरे ढ़ेले टूट जायें व मिट्टी अच्छी तरह भुरभुरी हो जाए। भूमिगत कीटों जैसे–दीमक आदी की रोकथाम हेतु बुवाई से पूर्व अन्तिम जुताई के समय क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण या क्योरपायरीफॉस 4 प्रतिशत 20–25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि में अच्छी तरह डालकर मिलाना चाहिए।

उन्नतशील किस्में

1. आजाद–1 : इस किस्म के फल बड़े, आकर्षक एवं चमकदार होते हैं। इस किस्म के फलों में बीजों की मात्रा कम होती है तथा भिण्ड़ी की लंबाई 15–20 से.मी. होती है। इस किस्म की भिण्ड़ी की त्वचा संकीर्ण एवं चिकनी होती हैं। यह किस्म पाउडरी मिल्ड्ये रोग एवे येलो वीन मोजेक वायरस के प्रतिरोधी होती हैं।

2. पार्किन्स लॉन्ग ग्रीन : इस किस्म के फल लंबे व पतले होते है जो लगभग 20–25 से.मी. के होते हैं तथा 1.5–2 से.मी. चौड़े होते हैं। इस किस्म की भिण्ड़ी की उत्पादकता उच्च होती हैं जो प्रति हैक्टेयर 150–200 क्विंटल तक उत्पादन देती हैं। तथा यह किस्म 55–65 दिनों में तैयार हो जाती है।

3. काशी लालिमा : इसके फल लालिमा रंग के होते हैं जो आकर्षक एवं चमकदार होते है। इस किस्म की भिण्ड़ी के फल लंबे एवं पतले होते है जो लगभग 15–20 से.मी. लंबे होते है।

4. काशी वरदान : इस किस्म के फल हरे, चमकदार एवं आकर्षक होते हैं तथा इस किस्म की भिण्ड़ी लगभग 50–60 दिनों में तैयार हो जाती हैं। इस किस्म की भिण्ड़ी विभिन्न जलवायु और मिट्टी की स्थितियों में उगाई जा सकती हैं।

5. उत्कल गौरव : इस किस्म की भिण्ड़ी की उत्पादकता उच्च होती हैं जो प्रति हैक्टेयर 250–300 क्विंटल तक उत्पादन देती हैं।

6. तुलसी : इस किस्म की भिण्ड़ी में बीजों की संख्या कम होती हैं, तथा यह किस्म पाउडरी मिल्ड्यु रोग के प्रतिरोधी होती हैं तथा इस किस्म से प्रति हैक्टेयर 200–250 क्विंटल उत्पादन प्राप्त होता है।

7. पूसा सावनी : फल गहरे हरे रंग के चिकने 5–6 धारियों युक्त, फल की लम्बाई 10–12 से.मी. फल 50 दिन में बाजार में बेचने लायक तथा पीतशिरा मोजेक रोग के लिए प्रतिरोधी किस्म है।

8. परभनी क्रांति : इस किस्म के फल गहरे हरे एवं 15 से.मी. लंबे होते हैं।

9. अर्का अभय : यह किस्म पीतशिरा मोजेक वायरस के प्रतिरोधी होती है।

10. हरभजन भिण्डी–1 : इसके पौधे बड़े, मध्यम आकार के होते है। पत्तियों में खुरदरी सतह होती है, फल लंबे, पतले एवं चमकीले, हरे होते हैं।

11. वर्षा उपहार : यह किस्म लेम सलेक्शन x परभनी क्रांति का संकरण है, यह किस्म पीतशिरा मोजेक रोग के प्रतिरोधी पौधे की ऊंचाई 90–120 से.मी. तथा पत्तियों का रंग गहरा हरा होता है। वर्षा ऋतु में 47 दिन बाद फूल आने के 7 दिन बाद फल तुड़ाई हेतु तैयार हो जाते है। फल चौथी–पांचवी गांठ में आने लग जाते हैं। यह किस्म पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान के लिए उपयुक्त है।

12. पूसा ए–4 : यह किस्म बुवाई के 45 दिन बाद तुड़ाई योग्य हो जाती है। फल की लम्बाई 12–15 से.मी. औसत उपज 120–150 क्विंटल प्रति हैक्टेयर। यह किस्म दोनों मौसम के लिए उपयुक्त है।

13. अर्का अनामिका : यह किस्म पीतशिरा मोजेक रोग के लिए प्रतिरोधी, पौधे सीधे शाखा युक्त एवं ऊंचाई 120–150 सेमी. होती है। फल मुलायम, गहरे हरे रंग तथा 5–6 धारियों वाले होते है। फलों का डंठल लम्बा होने से तुड़ाई आसानी होती है। औसत उपज 120–150 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

14. हिसार उन्नत : यह किस्म सलेक्शन–2 x परभनी क्रांति का संकरण है, पौधे की ऊंचाई 100–110 से.मी. तथा 3–4 शाखाओं युक्त होती है। फलों की पहली तुड़ाई 45 दिन बाद शुरू हो जाती है। औसल उपज 120–130 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

15. पंजाब पद्यमनी : फल गहरे हरे रंग, पतले, लम्बे एंव 5 धारियों वाले होते है। फलों की पहली तुड़ाई 60 दिन बाद शुरू हो जाती है। औसत उपज 90–120 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है। यह किस्म पीतशिरा मोजेक रोग के लिए प्रतिरोधी तथा दोनों मौसम में बुवाई के लिए उपयुक्त है।

16. काशी क्रांति : फल बुवाई के 45–46 दिन बाद तोड़ने योग्य, फलों की लम्बाई 8–10 से.मी. औसत उपज 125–140 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, यह किस्म पीतशिरा मोजेक रोग के लिए प्रतिरोधी तथा दोनों मौसम में बुवाई के लिए उपयुक्त है।

बीज दर एवं बुवाई

गर्मी में बुवाई फरवरी–मार्च तथा वर्षा ऋतु में जून–जुलाई माह में करनी चाहिए। गर्मी की फसल के लिए 18–20 किलोग्राम तथा वर्षा ऋतु की फसल के लिए 8–10 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता होती हैं। बीजों की बुवाई से पूर्व कार्बेडाजिम 50 डब्ल्यू.पी. फफूंदीनाशक से 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें। गर्मी की फसल के लिए बीजों को 24 घण्टे पानी में भिगोने के बाद बुवाई करने से बीजों का जल्दी एवं अच्छा अंकुरण होता है। गर्मी में कतार से कतार के मध्य दूरी 30–45 से.मी. तथा पौधें से पौधें के मध्य की दूरी 15–20 से.मी. तथा वर्षा ऋतु में कतार से कतार के मध्य दूरी 45–60 से.मी. तथा पौधें से पौधें के मध्य की दूरी 20–30 से.मी. रखकर बीजों की बुआई करें।

खाद एवं उर्वरक

खेत की तैयारी के समय 150–200 क्विंटल अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट खेत में मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन 50 किलोग्राम, फॉस्फोरस 50 किलोग्राम तथा 50 किलोग्राम पोटाश आखिरी जुताई के समय खेत में मिला देनी चाहिए। यदि फसल की बढ़वार ठीक से ना हो, तो एक प्रतिशत यूरिया का घोल बनाकर छिड़काव करना लाभदायक होता हैं। नत्रजन की एक तिहाई मात्रा बुआई एवं नत्रजन की शेष बराबर मात्रा दो टुकड़ों में पुश्पन एवं फलन के समय खड़ी फसल में देवें।

खरपतवार नियंत्रण

फसल वृद्धि की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार शीघ्र ही निकाल देना चाहिए, अन्यथा पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। बीज बुआई के 45 दिन तक फसल में 2–3 बार निराई–गुड़ाई करके खरपतवार एवं रोगग्रस्त पौधों को निकाल देना चाहिए। रासायनिक विधि द्वारा खरपतवार नियत्रंण के लिए मेटोलेक्लोर 50 ई.सी. की दो लीटर मात्रा या पेन्डिमेथेलिन 30 ई.सी. की 3.3 लीटर मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर की दर से बुआई के 48 घण्टे के अन्दर छिड़काव करें। छिड़काव के समय मृदा में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है।

सिंचाई

प्रथम सिंचाई अकुंरण होने के बाद प्रथम पत्ती अवस्था में करनी चाहिए, वरना बीज के सड़ने की आशंका बनी रहती हैं। फल बनने के समय उचित नमी बनी रहना आवश्यक है नहीं तो फलों के पकने से पहले रेशा बनने लगता है जिससे फलों की गुणवत्ता खराब होती है। गर्मियों के दिनों में 4–5 दिनों के अंतराल में सिंचाई करनी चाहिए। जबकि वर्षा ऋतु में फसल की आवश्यकता के अनुसार सिंचाई करें।

कटाई एवं उपज

किस्म की गुणवत्ता के अनुसार 45–60 दिनों में फलों की तुड़ाई प्रारंभ की जाती है तथा 4–5 दिनों के अंतराल में नियमित तुड़ाई की जानी चाहिए। फलों की तुड़ाई फूल खिलने (परागण) के 5–6 दिनों के पश्चात् करते रहना चाहिए। कोमल एवं रेशे रहित फल तोड़ कर बेचने से बाजार भाव अच्छा मिलता है। गर्मी की फसल से 80–100 क्विंटल तथा वर्षा ऋतु फसल से 120–150 क्विंटल प्रति हैक्टेयर प्राप्त होती है।

फसल कटाई उपरांत भंडारण

भिण्डी की फसल को ज्यादा दिनों तक नहीं रखा जा सकता है। इसको अधिक दिनों तक रखने के लिए फल को 8–10 डिग्री सेल्सियस तापमान पर और 90 प्रतिशत आर्द्रता पर भण्डारित करना चाहिए। स्थानीय बाजारों के लिए फलें को जूट की थैलियों में भरा जाता है जबकि दूरस्थ बाजारों के लिए छिद्रित कागज के थैलों में भरा जाता है।

भिण्ड़ी के प्रमुख कीट

माहूं एवं चेंपा कीट : यह कीट झुण्डों में पत्तियों, फूलों में चिपके रहते हैं तथा धीरे–धीरे पूरे पौधे को ढक लेते हैं, जिससे पौधों पर शूटीमोल्ड कवक उत्पन्न हो जाती है एवं फूलों से फल नहीं बन पाते हैं।

नियंत्रण : पीले रंग के चिपचिपे ट्रेप का उपयोग करें, जिससे माहूं चिपककर नष्ट हो जाते हैं। जैविक नियंत्रण के लिए परभक्षी कॉक्सीनेलिड्स/सिरफिड़ फ्लाई/क्राइसोपर्ला कॉर्निया मित्र कीटों का प्रयोग करें। ऐसीफेट 75 एस.पी., 500 ग्राम को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

हरा तेला एवं सफेद मक्खी : इस कीट के अर्भक व वयस्क दोनों पत्तियों का रस चूसकर पौधे को क्षति पहुंचाते हैं। ये कीट कोमल पत्तियों एवं तनों से रस चूसते है जिससे पत्तियां पीली होकर गिर जाती है जिसके कारण उपज प्रभावित होती है, तथा ये कीट विशाणु रोगों के वाहक का कार्य करते हैं।

नियंत्रण : इनके नियंत्रण के लिए 35–40 पीले एवं नीले रंग के चिपचिपे ट्रेप फसल से एक कीट की ऊंचाई पर डण्डे की सहायता से लगाये एवं ऐसीफेट 75 एस.पी., 500 ग्राम को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें। 10–15 दिनों के अन्तराल में छिड़काव को पुनः दोहरावे।

तना व फल छेदक : इस कीट की सूड़ियां भिण्ड़ी के फलों, फूलों, कलियों एवं पौधे की कोमल टहनियों को क्षति पहुंचाती है। फसल के प्रांरभ में ही जब पौधे 2–3 सप्ताह के हो जाते है उसी समय सूड़ियां निकलकर पौध के प्ररोह में छिद्र में प्रवेश कर जाती है जिससे पौधा मुरझा जाता है, इस तरह लगभग 50 प्रतिशत फसल नश्ट हो जाती है। इस कीट की लटे फलों को काफी हानि पहुंचाती है। कीट की लटे फल बनते समय फलों में छेद कर देती हैं जिसके कारण फल खाने योग्य नहीं रह जाते है।

नियंत्रण : कीट नियंत्रण के लिए 6–8 फेरामानेट्रप या परभक्षी पक्षियों द्वारा नियंत्रण के लिए टी आकर की खुटी लगाये ताकि पक्षी इस पर

बैठकर इन्हें खाकर नष्ट कर सकें। फूल आने के तुरन्त बाद ऐसीफेट 75 एस.पी. 1.5 ग्राम या क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 2.0 मिलीलीटर प्रति लीटर या इमामेक्टिन बेन्जोएट 3 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें। अण्ड परजीवी ट्राइकोकार्ड (ट्राईकोग्रामा किलोनिस) एक लाख अण्ड परजीवी प्रति हैक्टेयर की दर से 15 दिन के अंतराल में फसल में छोड़ने से जैविक नियंत्रण किया जा सकता है।

बिलिस्टर बिटल (ककोला भृंग): यह भिण्ड़ी के फूलों के पराग, पंखुड़ी एंव फूलों की कलियों को खाता है जिससे फल नहीं बन पाते है।

नियंत्रण: क्लोरोपयरीकॉस 20 ई.सी. दो मिली प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

पत्ती लपेटक कीट: इस कीट की नवजात सूडियां पत्तियों की निचली सतह को खाती है और बाद में पत्तियों को किनारों से मोड़कर उनके बीज में रहकर खाती हैं।

नियंत्रण: खेत में चिड़ियों के बैठने के लिए बर्ड पर्च लगाना चाहिए। क्लोरोपयरीकॉस 20 ई.सी. दो मिली प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

भिण्ड़ी का लाल बग: इस कीट के छोटे–छोटे अर्भक निकलकर कोमल पत्तियों का रस चूसना शुरू कर देते हैं, अर्भक व वयस्क दोनों पौधे के विभिन्न भागों का रस चूसकर हानि पहुंचाते हैं।

नियंत्रण: खेत में मैलाथिमान 5 प्रतिशत चूर्ण या फेनवरलेट चूर्ण 0.4 प्रतिशत का 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करके कीट की रोकथाम की जा सकती है।

माइट्स (वरूथी): कीट का आक्रमण जुलाई–अगस्त वाली फसल में अधिक होता है। निम्फ एवं वयस्क दोनों की पौधों एवं पत्तियों की निचली सतह से रस चूसकर नुकसान पहुंचाते है। संक्रमित टहनियां और फल दोनों पीले पड़ जाते है। इसके अधिक आक्रमण से फूल एवं फलों की संख्या में कमी हो जाती है। जिसकी वजह से उपज में कमी आती है। इसके नियंत्रण के लिए प्रोपरजाईट 57 ई.सी. या डाइकोफोल 18.5 ई.सी. 2–3 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें।

भिण्ड़ी के प्रमुख रोग

पीतशिरा मोजेक वायरस रोग: यह भिण्ड़ी की सबसे खतरनाक रोग है, इस रोग से कभी–कभी संपूर्ण फसल नष्ट हो जाती है, इस रोग के लक्षण मुख्य रूप से पत्तियों पर दिखाई देते है। पत्तियों में शिराओं का पीला जाल सा दिखाई देने लगता है। शिरा एवं शिराऐं सामान्य से मोटी हो जाती है तथा शिराओं के अलावा पौधे का अन्य भाग हरा बना रहता है, परंतु अधिक संक्रमण होने पर पूरी पत्ती पीली नजर आती है, नई पत्तियां संक्रमण होते ही छोटी रह जाती है और पौधा भी बौना रह जाता है। पत्तियां चितकबरी होकर प्यालेनूमा आकार की बन जाती है।

उपचार: ये विषाणु खरपतवारों जैसे– मालवेस्ट्रम, ट्राइकरिपडेटम आदि पर पाया जाता है। अतः ऐसे खरपतवारों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए। इसके नियंत्रण के लिए रोग प्रारंभ की अवस्था में रोगग्रस्त पौधों को खेत से उखाड़कर नश्ट कर देंवे तथा फूल आने से पहले एवं बाद में मेलाथियान 50 ई.सी. दो मिली या इमिडाक्लोप्रिड एक मिली प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर 10–15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए। रोग प्रतिरोधी किस्मों अर्का अनामिका, वर्षा उपहार, पंजाब पद्मिनी, अर्का अभय का प्रयोग करें।

उकठा रोग: यह फफूंद जनित बीमारी हैं। शुरूआत में बीजाकुंर व प्रौढ़ अकस्मात मुरझाने लगते हैं, बड़े पौधे की पत्तियां पीली पड़कर मुरझाने लगती हैं और पौधे की कुछ शाखाएं या संपूर्ण पौधा सूख जाता हैं।

उपचार: बीज बुवाई से पूर्व कार्बेडाजिम 50 डब्ल्यूपी दो ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें। भूमि उपचार के लिए ट्राईकोड्रमा जैविक फफूंदीनाशक 3–4 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से काम में लेंवे।

जड़ सड़न रोग: यह एक फफुंदीजनित रोग है। प्रभावित पौधे की जड़े सड़ जाती है।

उपचार: फसल चक्र अपनाऐं। बुआई से पूर्व भूमि को ट्राईकोड्रमा जैविक फफूंदीनाशक 3–4 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से उपचारित करें। बीजोपचार कार्बेडाजिम 50 डब्ल्यूपी दो ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से करें।

चूर्णित आसिता: इस रोग में पत्ती की सतह पर सफेद रंग की चूर्ण के समान कवकीय वृद्धि दिखाई देती है जिससे पत्तियां धीरे–धीरे सूख जाती है और पीली होकर गिरने लगती है।

उपचार: रोग के लक्षण दिखाई देते ही कैराथेन 2 ग्राम मात्रा का प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। फसल अवशेषों को जलाकर नष्ट कर दें।

पत्ती धब्बा: इस रोग से पत्तियों पर छोटे–छोटे गोल अण्डाकार व अनियमित आकार के गहरे भूरे व लाल धब्बे पड़ते है जो बाद में बढ़कर संपूर्ण पत्ती को घेर लेते हैं और अन्त में पत्तियां सूखकर गिर जाती है।

उपचार: संक्रमण से बचने के लिए बीजोपचार कार्बेडाजिम 50 डब्ल्यूपी दो ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से करें। रोग से बचाव के लिए मेंकॉजेब 75 डब्ल्यूपी 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

सुत्रकृमी: पौधों की बढ़वार रूक जाती है, पत्तियां का पीली होकर सुखना, फल कम लगने की वजह से उपज घट जाती है।

उपचार: इसके नियंत्रण के लिए गर्मी में गहरी जुताई करे एवं गेंदा के पौधों की कतार फसल में लगायें या नीम की खल 500 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि का उपचार करें।

***

फलदार पौधे लगाने की वैज्ञानिक तकनीक

अनोप कुमारी, अर्जुन सिंह जाट एवं महेश चौधरी
कृषि विज्ञान केन्द्र, मौलासर–डिडवाना–कुचामन एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, अरनियां–श्रीमाधोपुर, सीकर

भारत एक कृषि प्रधान देश है एवं यहां की लगभग 70 प्रतिशत आबादी आजीविका के लिए खेती पर ही निर्भर रहती है। देश का आर्थिक व सामाजिक ढांचा इसी पर टिका है। कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था की आधारशिला है। करोड़ों लोग प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से इस व्यवसाय से जुड़े हुए है। बागवानी फसलें पोशण सुरक्षा एवं आर्थिक दृष्टिकोण से काफी महत्वपूर्ण है एवं रोजगार अवसरों में भी वृद्धि करने में सहायक होती है। पिछलें कुछ वर्षो में इनकी खेती में उल्लेखनीय प्रगति हुई है और देश के कई प्रदेशों में बागवानी ने एक व्यवसाय का रूप ले लिया है। जो किसान भाई परंपरागत खेती कर रहे है अब वे भी फसलों में विविधीकरण के लिए बागवानी फसलों का चुनाव कर है खासकर फलदार वृक्षों का। चीन के बाद विश्व में फलों के उत्पादन में देश का दूसरा स्थान है परन्तु उत्पादकता की बात की जाए तो कुछ चुनिंदा फलों को छोड़कर विश्व में इस मामले में अभी हम काफी पीछे है। कम उत्पादकता के कई कारण हो सकते है परन्तु इनमें मुख्यरूप से गुणवत्तायुक्त रोपण सामग्री का अभाव, खाद व उर्वरको को असंतुलित उपयोग, कीट एवं बिमारियों का प्रकोप आदि प्रमुख कारक है। वैज्ञानिक तरीके से बाग लगाकर यदि सही तरीके से प्रबंधन किया जाये तो निश्चित रूप से उत्पादकता को बढाया जा सकता है।

देश में विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग जलवायु पायी जाती है एवं उसी के अनुसार विभिन्न प्रकार के फलदार पौधें लगाये जाते है। फल वृक्ष बहुवर्षीय प्रकृति के होते है एवं इनमें फलन प्रारम्भ होने की अवधि औसतन 3–7 वर्ष की होती है वही दूसरी ओर किसान का अधिकतर निवेश बाग की स्थापना के समय ही हो जाता है जिसका फायदा आने वाले वर्षो में मिलता है। यह देखने में आता है कि किसान नये बाग–बगीचें लगाते समय कई गलतियां कर बैठते है जिनको बाद के वर्षो में सुधारना बहुत कठिन होता है एवं उनका खामियाजा आने वाले वर्षो में भुगतना पड़ता है। अतः पौधों का रोपण इस तरह किया जाना चाहिए कि बाग में मौजूद संसाधनों का पूरा इस्तेमाल हो सके साथ ही वो देखने में अच्छा लगे एवं जिसकी देखभाल में कम खर्च हो जिससें अधिक से अधिक फायदा मिल सके। नये बाग की स्थापना के समय जरूरी हो जाता है कि सही योजना बना कर उसका सही तरीके से क्रियान्वित करे ताकि सफलता अर्जित की जा सके। फलदार पौधों के साथ एक प्रचलित कहावत जुड़ी हुई है "करोगे सेवा तो मिलेगा मेवा" इससे तात्पर्य है कि फल वृक्षों की जितनी देखभाल करोगे उनसे उतना ही मेवा (फल) मिलेगा। यह तभी संभव हो पायेगा जब रोपण के समय से ही ध्यान रखा जाएगा। प्रस्तुत लेख में नये बाग–बगाचों की रोपण सामग्री से लेकर उसकी स्थापना एवं देखरेख से संबंधित सभी तरह के तकनीकी पहलुओं का विस्तृत वर्णन किया गया है जिससें किसानों को अच्छा उत्पादन मिल सके। निम्नलिखीत बिंदुओं को समझना आवश्यक है।

सोच–समझकर करें स्थान का चुनाव

दीर्घकालिन निवेश होने के कारण बाग की स्थापना वाली जगह का चुनाव बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। रोपण हेतु जहां तक हो सके ऐसे स्थान का चयन करे जहां आवागमन के साधन सहजता से उपलब्ध होने के साथ ही श्रमिकों की उपलब्धता, पानी की व्यवस्था, भूमि का जल निकास, इत्यादि का भी समुचित प्रबंधन हो। यह भी ध्यान रखे कि खेत में दो मीटर की गहराई तक किसी प्रकार की सख्त कठोर कंकड़युक्त परत नहीं हो, क्योंकि ऐसी मृदा में पौधों की जड़े अधिक गहराई तक ना जा सकने के कारण उचित पैदावार नही मिल पाती है। यह भी देख लें कि मृदा अत्यधिक लवणीय या अम्लीय एवं दलदली ना हो।

सही ढंग से करे भूमि की तैयारी

स्थान का चुनाव करने के पश्चात् खेत में से सभी झाड़ीदार अथवा जंगली पौधो को निकाल कर साफ कर देवें, किसी झाड़ी की जड़े अधिक गहराई तक है तो उनको खुदाई करके अच्छी तरह निकाल देवें। ऊबड़–खाबड़ खेत होने की दशा में उसका समतलीरण भी आवश्यक है नही तो कृषि कार्य के अलावा बगीचें में सिंचाई, पोषण प्रबंधन करते समय बहुत कठिनाई आती है। ध्यान रखें की खेत का ढलान 5–10 प्रतिशत से अधिक नही हो, यदि ढलान अधिक है तो खेत को समतल कर लेवें। खेत की उर्वरता शक्ति कम है तो हरी खाद (सनई, ढेंचा) का प्रयोग करें साथ ही क्षारीय व लवणीय तथा अम्लीय मृदाओ हाने की स्थिती में इनके सुधार हेतु मुदा सुधारको क्रमशः जिप्सम अथवा चुने का प्रयोग करें। खेत की तैयारी के साथ ही इसकी सुरक्षा हेतु भी उचित उपाय करने आवश्यक है इस हेतु कांटेदार तार, जालीदार तार अथवा कांटेदार पौधें जैसे बोगनविलिया, करौंदा का रोपण किया जा सकता है जोकि बाहरी व्यक्तियों के साथ ही जंगली जानवरों को खेत में घुसने से रोक सके। अर्ध शुष्क क्षेत्रों में बाड़ के लिए करौंदा एक बेहतर विकल्प है क्योंकि एक तो यह जंगली जानवरों से रक्षा करता है दूसरा पौधों पर लगे फलों को बेचने से अतिरिक्त आमदनी मिल जाती है।

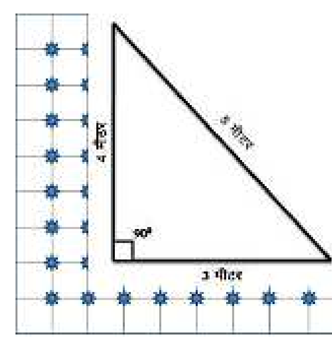

वायुरोधी वृक्ष करे कवच का काम

पौधों के रोपण के पश्चात् वानस्पतिक व उत्पादक अवस्था में हवा के तेज झोंकों से बहुत नुकसान पहुंचता है। उत्पादक अवस्था में तो कई बार तो यह देखने में आता है कि हवा की तीव्रता अधिक होनें से पूरी फसल खराब हो जाती है अतः इस क्षति से बचने के पर्याप्त सुरक्षा आवश्यक है। वायुरोधक वृक्ष गर्मी में लू तथा सर्दी में पाले से बचाव तो करते ही है साथ ही बाग का सुक्ष्म वातावरण भी परिवर्तित कर देते है। इस हेतु ऐसे पौधो का चयन करना चाहिए जिनकी बढवार तेजी से होने के साथ ही सूखे व पाले से अवरोधी हो एवं ये रोग व बिमारियों को आश्रय प्रदान ना करने वाले हो। सामान्यतः देशी आम, जामुन, बेल, शहतूत, खिरनी, देशी आंवला, शीशम, कैंथ, कटहल, इमली आदि वृक्ष इस उद्देश्य हेतु उगा सकते है। वायुरोधी वृक्ष अपनी लम्बाई के 4–6 गुना दूरी तक बाग की रक्षा करते है। बाग में वायु अवरोधक वृक्षों की एक या दो कतार लगाई

जाती है। सामान्यतः वायु अवरोधक वृक्षों को बाग में उत्तर व पश्चिम दिशा में लगाया जाता है। खेत में जगह पर्याप्त हो तो ये वायुरोधक वृक्ष खेत के चारो ओर भी लगा सकते है।

सही तरीके सें करे पौधों का रोपण

बाग लगानें की कई विधियां प्रचलित है जिनमें वर्गाकार, आयताकार, षट्भुजाकार, पूरक व समोच्च रेखा विधि प्रमुख है। ऐसी विधि का चुनाव आवश्यक हो जाता है जिससे कम खर्चे व देखभाल के साथ ज्यादा से ज्यादा फायदा मिल सके साथ ही मौजूद संसाधनो का भी उपयोग हो सके। मैदानी भागों में वर्गाकार विधि अधिक प्रचलित है क्योंकि यह आसान व सुगम होने के साथ ही इसमें सभी प्रकार के कृषि कार्य आसानी से किये जा सकते है। इसमें कतार से कतार व पौधे से पौधे की दूरी बराबर रखी जाती है। पौधे एक–दूसरे से 90 डिग्री सेल अंश पर लगाए जाते है इस तरह चार पौधे मिलकर एक वर्ग की तरह दिखाई देते है। चूँकि बाग में लम्बाई और चौडाई में बराबर दूरी रहती है, अतः बाग में कृषि क्रियाएं अच्छी तरह से की जा सकेगी और पौधों को पर्याप्त सूर्य की रोशनी भी मिलती रहेगी।

गड्ढों की खुदाई सें पूर्व खेत का रेखांकन आवश्यक है यह बाग स्थापना की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। खेत के एक छोर पर खड़ा होकर जब सम्पूर्ण बगीचें को देखा जाए तो सभी लाईनें बिल्कुल सीधी दिखनी चाहिए। रेखांकन करने के लिए सर्वप्रथम एक बेस लाईन (आधार रेखा) खींचे। आधार रेखा पर जहां पहला पौधा लगाना है वहां पर 90 डिग्री का कोण बनाकर साईड लाईन खींचे इसके पश्चात् प्रत्येक पंक्ति के लिए आवश्यक दूरी रखते हुए सम्पूर्ण खेत में दोनो किनारों से इसी क्रम से वर्गाकार विधी द्वारा रेखांकन कर लेते है तथा अंकित स्थानों पर गड्ढों की खुदाई वाले स्थानों पर खूटियां लगा देते है।

सीधी रेखा खींचने की विधि

गड्ढों की खुदाई का समय व आकार का भी रखें ध्यान

रेंखाकन के समय चिन्हित स्थानों पर गड्ढों की खुदाई का कार्य प्रारम्भ करे। गड्ढों का आकार पौधों के फैलाव व उनकी बढवार पर निर्भर करता है। बड़े आकार के फल वृक्षों जैसे आम, आंवला, कटहल, बेल, जामुन, लीची इत्यादि के लिए 1 x 1 x 1 मीटर आकार (लंबा, चौडा, एवं गहरा) के गड्ढों की आवश्यकता होती है। मध्यम आकार वाले फल वृक्षों जैसे अमरूद, नींबूवर्गीय फल, सीताफल, अनार आदि के लिए 0.75 x 0.75 x 0.75 मीटर आकार व छोटे आकार वाले फल वृक्षों जैसे पपीता, करौंदा आदि के लिए 0.5 x 0.5 x 0.5 मीटर आकार के गड्ढों की खुदाई करे। गड्ढों के आपस की दूरी फलदार पौधो की प्रकृति, रोपण की विधि व लगायी जाने वाली किस्म पर निर्भर करती है। विभिन्न तरह के फलदार पौधो को लगाने की दूरी (कतार से कतार व पौधे से पौधे की दूरी) सारणी 1 में दर्शायी गयी है। गड्ढों की खुदाई का कार्य मई–जून के महिनों में सूर्य की किरणें अपना रंग दिखाने लग जाती है एवं गर्मी अपनी चरम सीमा पर होती है। गड्ढें खोदते समय ध्यान रखे कि इनके ऊपर की आधी मिट्टी एक तरफ डाल दे व शेष नीचे की आधी मिट्टी को दूसरी तरफ डाल दे। खुदाई के पश्चात् गड्ढों को 30 से 40 दिन तक तेज धूप में खुला ही छोड़ देना चाहिये। तेज धूप के कारण मृदा में उपस्थित हानिकारक कीटाणु व जीवाणु समाप्त हो जाते है। उसके पश्चात् जो ऊपर की आधी मिट्टी गड्ढा खोदते समय अलग निकाली थी उसमें प्रति गड्ढें के हिसाब सें लगभग 20–25 किलोग्राम अच्छी तरह सड़ी गली गोबर की खाद के अलावा 200 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट, 500 ग्राम नीम खली व 50 ग्राम क्लोरोपाइरीफॉस धूल मिला कर भर देवें। गड्ढों की भराई जमीन की सतह सें 15–20 सेंमी ऊपर तक करें एवं कुछ समय तक व्यवस्थित होने के लिये छोड़ दे। 1–2 बारिश के पश्चात् मिट्टी जब नीचे बैठ जाती है उसके बाद पौध्रा रोपण का कार्य प्रारंभ करे।

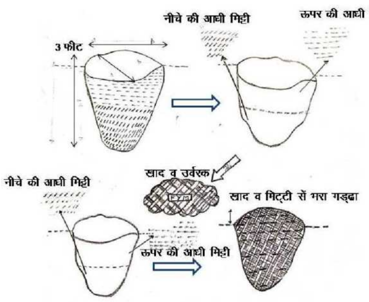

गड्ढों की खुदाई करने का तरीका

तालिका 1: विभिन्न तरह के फलदार पौधों को लगाने की दूरी एवं प्रति हेक्टेयर में लगने वाले पौधों की संख्या

क्र.सं.	फलदार पौधों का नाम	दूरी (पौधें से पौधें एवं कतार से कतार) मीटर में	प्रति हेक्टेयर में लगने वाले पौधों की संख्या
1.	नींबूवर्गीय फल	6 x 6	277
2.	केला	1.8 x 1.8	3086
3.	अमरूद	6 x 6	277
4.	आम (बौनी किस्में)	5 x 5	400
5.	आम (मध्यम आकार से बड़ी किस्में)	10 x 10	100
6.	टनार	5 x 5	400
7.	पपीता	1.5 x 2	4444 से 2500
8.	टांवला	8 x 10	156 से 100
9.	ब्ेल	8 x 10	156 से 100
10.	चीकू	10 x 10	100
11.	सीताफल	5 x 5	400
12.	लीची	10 x 10	100

सही फल वृक्ष व किस्म का करें चुनाव

बगीचें की रूपरेखा में एक महत्वपूर्ण पहलू फलदार पौधे एवं उनकी किस्मों के चयन को लेकर भी है क्योंकि यह खाद्यान्न फसलों की तरह नही होते जो सभी प्रकार की मृदाओं में आसानी से उगाये जा सके। कौन–कौन सें फलदार पौधों का रोपण किया जा सकता है यह सब मृदा के स्वभाव एवं जलवायु पर निर्भर करता है। फल वृक्षों का चयन करनें सें पूर्व अपने नजदीकी कृषि विज्ञान केन्द्र अथवा बागवानी विभाग के विशेषज्ञो से सलाह–मशविरा अवश्य करें। फसल का चयन, खेत की मिट्टी व पानी की जांच की रिपोर्ट के आधार पर ही करें। सामान्य स्वभाव वाली मृदाओं में सभी प्रकार के फल वृक्ष आसानी से लगाये जा सकते है परन्तु अधिक लवणीय व क्षारीय भूमि में कुछ चयनित पौधे जैसेः बेर, आंवला, खजूर, बेल पत्र, लसोड़ा, करौदा, जामुन इत्यादि ही लगाये जा सकते है। फलदार पौधों की लवणीय सहनशीलता स्तर अलग–अलग होती है जोंकि सारणी 2 में दर्शाया गया है उसी अनुरूप पौधों का चयन करें।

तालिका 2ः विभिन्न फलदार पौधों का लवणीय सहनशीलता स्तर

क्र.सं.	लवणीय सहनशीलता स्तर	फलदार पौधे का नाम
1	अत्यधिक	खजूर, जामुन, बेर
2	मध्यम	आंवला, फालसा, अमरूद, अंजीर, अनार
3	निम्न लवणीय	नींबूवर्गीय फल, आम

फल वृक्ष का चुनाव करने के पश्चात् बात आती है सही किस्म के चयन की। फल वृक्षों की सदाबहार प्रकृति के कारण सही किस्म और गुणवत्तायुक्त रोपण सामग्री का चुनाव करना बहुत आवश्यक हो जाता है ताकि अच्छी गुणवत्तायुक्त उत्पाद के साथ ही अधिक ऊपज मिल सके। किस्मों का प्रदर्शन क्षेत्र विशेष व जलवायु पर भी निर्भर करता है। किस्मों के साथ ही वर्तमान में कई महत्वपूर्ण मूलवृंतों की पहचान की गई है जो कि फल वृक्षों की उत्पादकता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। वानस्पतिक प्रवर्धन से तैयार पौधों में नीचे वाला भाग अर्थात जड़ वाला भाग मूल वृन्त कहलाता है। मूलवृंत कई वांछनीय गुणों से विद्यमान होते है जिन्हें आधुनिक फलोत्पादन में उपयोग किया जाता है। आम के लिए जैसे कुरूक्कन, वैल्लई कोल्मबल एवं औलुर, अंगुर के लिये सॉल्ट क्रिक व डॉगरीज, अमरूद में सिडियम फ्रेड्रिक्सयेलियेनम, नींबू प्रजाति के फलो में जट्टी–खट्टी, कर्णा खट्टा, रंगपुर लाइम, ट्रायर सिन्ट्रेंज आदि महत्वपूर्ण मूलवृंत है जो कि नये पौधे तैयार करने के लिए सामान्यतौर पर उपयोग किये जाते है। कुछ प्रमुख फलदार पौधे एवं उनकी किस्मों के नाम सारणी 3 में दिये गये है।

तालिका 3ः फलदार पौधों की उपयुक्त किस्में

क्र.सं.	फल	किस्म
1	अमरूद	इलाहाबाद सफेदा, सरदार (एल–49), ललित, श्वेता, अर्का अमूल्य, अर्का मृदुला, श्वेता, पंत प्रभात, हिसार सुर्खा, हिसार सफेदा, इलाहाबाद सुर्खा
2	आम	आम्रपाली, मल्लिका, लंगड़ा, दशहरी, पूसा सूर्या, पूसा पिताम्बर, पूसा अरूर्णिमा, पूसा श्रेष्ठ, चौसा
3	अनार	भगवा, गणेश, मृदुला, जालोर सीडलेस, अरक्ता
4	पपीता	ताइवान, पूसा डिलिशियस, पूसा मजेस्टी, पूसा जॉयन्ट, पूसा ड्वार्फ, सूर्या, कुर्ग हनी ड्यू, पूसा नन्हा
5	चीकू	काली पत्ती, क्रिकेट बॉल, पी.के.एम.1
6	आंवला	गोमा ए वर्या, बनारसी, हाथीझूल, चकिया, एन.ए.–4, एन.ए.–7, एन.ए.–10
7	बेल	गोमा याशी, थार दिव्य, थार नीलकंठ, एन.बी.–5, एन.बी.–9, पंत अपर्णा, पंत शिवानी, पंत उर्वशी, पंत सुजाता, सी.आई.एस.एच.बी.–1, सी.आई.एस.एच.बी.–2
8	नींबू	प्रमालिनी, विक्रम, कागजी कलां, सांई सरबती, पंत लेमन
9	बेर	थार सेविका, गोमा कीर्ती, थार भूज, गोला, सेब, मून्डिया, कैथली, उमरान, टिकड़ी
10	जामुन	गोमा प्रियका, राज जामुन, नरेन्द्र जामुन–6
11	सीताफल	बालानगर, अर्का शान, रेड सीताफल
12	लीची	शाही, स्वर्ण रूपा, बेदाना, रोज सेन्टेड, देहरादून, कलकतिया, चाइना, सबौर बेदाना

पौधें कहा से खरीदे व किन बातों का रखे ध्यान

- प्रारंभिक अवस्था में फलदार वृक्षों की पहचान करना बहुत कठिन होता है अतः यह आवश्यक हो जाता है कि पौधें हमेशा विश्वसनीय स्त्रोत जैसे–कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, उद्यान विभाग या अन्य कोइ प्रमाणीत संस्था से ही खरीदे।
- पौधें खरीदते समय यह सुनिश्चित कर ले कि वह स्वस्थ एवं रोग मुक्त हो अन्यथा यह समस्या खेत तक भी जाने की संभावना रहती है।
- कलमी पौधों में यह भी ध्यान रखें कि मूलवृंत व शायन का जुड़ाव सही हो।
- अधिक उम्र वाले पौधें भी नर्सरी सें खरीदने से बचे।

समय पर करे पौध रोपण का कार्य

रोपण का सही–सही समय स्थानीय जलवायु, पानी की उपलब्धता, पौधों का स्वभाव आदि पर निर्भर करता है। पर्वतीय अथवा पतझड़ी पौधे जैसे आडू, अलूचा, अंगूर, नाशपाती, आंवला, बेर आदि लगाने के लिए सर्दियों का मौसम (दिसम्बर–फरवरी) बहुत अच्छा रहता है। सदाबहारी पौधों जैसे आम, नींबू, अमरुद, अनार, लीची आदि के लिये बरसात वाला समय (जुलाई–अगस्त) सर्वोतम होता है। सिंचाई जल की पर्याप्त उपलब्ध्ता होने पर रोपण का कार्य फरवरी–मार्च में भी किया जा सकता है। गड्ढों में पौधें लगाते यह ध्यान रखें कि पौधें गड्ढों में उतनी गहराई तक ही लगे जितनी गहराई तक वह नर्सरी या पॉलीथीन की थैली में था। अधिक गहराई में लगाने से तने को हानि पहुँचती है और कम गहराई में लगाने से जड़े मिट्टी के बाहर जाती है, जिससे उनको क्षति पहुँचती है।

रोपण करते समय यह भी ध्यान रखे कि पौधा गड्ढें के मध्य में लगे साथ ही मिट्टी की पिंडी ना बिखरे अन्यथा जड़ों के क्षतिग्रस्त होने की भी संभावना होती है। प्लांटिग बोर्ड का उपयोग भी पौधों को गड्ढें के बीचों–बीच लगाने के लिए किया जा सकता है। पौधे का कलम किया हुआ स्थान अर्थात् मूलवृन्त और सांकुर डाली या मिलान बिन्दु भूमि से हमेशा ऊपर ही रहना चाहिए। पौधा लगाने के पश्चात् उसके आस–पास की मिट्टी अच्छी तरह दबा देनी चाहिए, जिससे सिंचाई करने में पौधा टेढ़ा न हो पाए। जहाँ तक सम्भव हो पौध रोपण का कार्य सायंकाल के समय ही करना चाहिए जिससें उनको स्थापित होने के लिए पर्याप्त समय मिल सके।

सिंचाई प्रबंधन भी है महत्वपूर्ण

रोपण का कार्य बारिस वाले मौसम में कर रहे है तो अधिक पानी की आवश्यकता नही होती परन्तु यदि बारिस नही हो रही है तो रोपण के तुरन्त पश्चात् सिंचाई अवश्य करे। गर्मियों में 7–10 दिन के अंतराल पर और सर्दियों में 15–20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। सिंचाई का सही समय मौसम, मृदा का प्रकार, मृदा में कार्बनिक पदार्थो की मात्रा आदि पर निर्भर करता है। सिंचाई अन्तराल निर्धारण करते समय फसल बढ़ोतरी की नाजुक स्थितियों एवं विकास को भी घ्यान में रखना चाहिए। वर्तमान में बगीचों में पानी लगाने के लिए अधिकांश किसान टपक सिंचाई प्रणाली अपना रहे है। यह पद्धति सिंचाई की पद्धतियों में सबसे आधुनिक है इसें ड्रिप सिंचाई प्रणाली से भी जाना जाता है। ड्रिप तंत्र एक अधिक आवृति वाला ऐसा सिंचाई तंत्र है जिसमें जल को पौधों के मूलक्षेत्र के आसपास दिया जाता है। सिंचाई की इस पद्धति द्वारा पौधें की किस्म, उसकी आय के नापी, क्षेत्रफल, स्थान विशेष की भूमि एवं जलवायु संबंधी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए वास्तविक जल मांग के अनुरूप जल की सही मात्रा पौधों के प्रभावी जड़ क्षेत्र में पहुंचा सकते है।

खाद एवं उर्वरक

खाद एवं उर्वरको के उपयोग का मुख्य उद्देश्य पौधों के समुचित विकास एवं बढ़वार के साथ ही मृदा में अनुकूल पोषण दशाएं बनाए रखना होता है अतः सन्तुलित मात्रा में खाद एवं उर्वरकों का उपयोग करना आवश्यक होता है। पोषक तत्वों की कमी या अधिकता का फसल पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। बाग लगानें सें पूर्व मृदा जांच आवश्यक रूप से करवा लेनी चाहिए एवं उसी के सिफारिस के आधार पर खाद व उर्वरकों का इस्तेमाल करना चाहिए। फल वृक्षों में खाद एवं उर्वरको की मात्रा, मृदा की उर्वरता, पौधों की उम्र तथा फसल को दी गयी कार्बनिक खादों की मात्रा पर निर्भर करती है। खाद व उर्वरक हमेशा तनें सें दूर ही डाले और पौधे के फैलाव तक डालें। सामान्यतः एक वर्ष के पौधें में 5 किलोग्राम अच्छी सड़ी गोबर की खाद के अलावा 50 ग्राम नत्रजन, 25 ग्राम फॉस्फोरस व 50 ग्राम पोटाश डालें। यह मात्रा पौधें की उम्र कि हिसाब सें बढती जाती है।

अंतरवर्ती फसलों से ले अतिरिक्त मुनाफा

बड़े एवं मध्य आकार के फल वृक्षों के रोपण के प्रारंभिक वर्षो में 60–80 प्रतिशत तक जगह खाली पड़ी रहती है। किसान को भी जब तक फल वृक्षों सें उत्पादन प्रारम्भ नही होता है तब तक बगीचें से किसी तरह की आमदनी नही मिलती है बल्कि देखरेख पर खर्च ही करना पड़ता है। अतः बगीचें के इस अवस्था में आर्थिक लाभ के लिए अनेक प्रकार की अल्प अवधि वाली फसलें उगा सकते है। बगीचे में स्थायी खड़े फलदार वृक्षों के मध्य खाली पड़ी जमीन पर मौसमी फसलों की बुवाई कर उनसें पैदावार प्राप्त करने को अन्तः सस्यन फसल (इन्टर–क्रापिंग) कहते है। फसलों का चुनाव मृदा की उर्वरता, स्थानीय बाजार मांग, संसाधनो की उपलब्धता, बाजार से दूरी, फल वृक्षों की आयु, मुख्य फसल का स्वभाव आदि को ध्यान में रखते हुये करना चाहिए। द्विबीजपत्री (दलहनी) फसलें अन्तः सस्यन के लिए अधिक फायदेंमंद रहती है क्योंकि ये भूमि की उर्वरा शक्ति में तो वृद्धि करती ही है साथ ही इनसें आर्थिक लाभ भी अच्छा मिल जाता है। शहरी क्षेत्र के आस–पास सब्जियां उगाकर भी अधिक मुनाफा लिया जा सकता है परन्तु दलहनी फसलों की अपेक्षा इनमें थोड़ी अधिक देखरेख की आवश्यकता पड़ती है।

अनार के साथ धनियां की फसल

पौधों को दे सही आकार

रोपण के प्रारंभिक वर्ष में ज्यादा कांट–छांट की आवश्यकता नही होती है परन्तु मूलवृंत सें निकलने वाली नयी शाखाओ (कल्ले) को समय–समय पर निकालते रहना चाहिये। पौधा जब एक वर्ष का हो जाए उसके बाद उचित आकार देने के लिए कटाई–छंटाई की जाती है जिससें पौधे के आकार को नियन्त्रित रखा जा सके ताकि बाग के समस्त सम–सामयिकी कार्य आसानी से किये जा सके साथ ही पौधे का मजबूत ढाँचे का विकास किया जा सके। अधिकांश फल वृक्षों की सधाई एकल तना रखते हुए की जाती है तथापि अनार, अंजीर, शरीफा, जिसके तने में कीटों का प्रकोप अधिक होता है, एक से अधिक (3–4) तना रखते हुए साधा जाता है। सही आकार देने सें पौधें के भीतरी हिस्सों में सूर्य की रोशनी तथा वायु का संरचरण अच्छा होता है जिससें अच्छे फलन में सहायता मिलती है।

महत्वपूर्ण है छत्रक प्रबंधन

इन बातों का भी रखें ध्यान

- फल वृक्षों के तनें के आस–पास खरपतवार पनपनें नही दे क्योंकि यें नमी सोखने के अलावा मुख्य फसल सें पोषण एवं प्रकाश के लिये स्पर्धा तो करते ही है साथ में कीट एवं बिमारियों को भी बढावा देते है। इस हेतु सूखे पत्तें, पुआल, धान का भुसा, सुखी घास, आदि का उपयोग कर सकते है। वर्तमान मे 100 माइक्रॉन प्लास्टिक फिल्म का उपयोग काफी प्रचलन में है यह अन्य प्रकार की पलवार से ज्यादा उपयुक्त है।
- पौधें की प्रारम्भिक अवस्था में पत्ती काटने व रस चूसक कीट, दीमक, तना गलन आदि कई समस्यायें आती है अतः विशेषज्ञों की सलाह से समय पर इनके निदान के उपाय करें।
- सर्दियों में पालें से बचाव के लिए पर्याप्त उपाय करने चाहिए, इस हेतु पौधों को घास–फूस की टाटिया बनाकर ढ़क देवे अथवा जिस रात पाला पड़ने की संभावना हो उस रात आस–पास खेत की उत्तरी पश्चिमी दिशा से आने वाली ठंडी हवा की दिशा में खेतों के किनारे पर कूड़ा–कचरा या अन्य व्यर्थ घास–फूस जलाकर धुआं करना चाहिए। शीतलहर के प्रभाव को सिंचाई करके भी कम किया जा सकता है। पाला पड़ने की संभावना हो तब खेत में हल्कि सिंचाई कर देवें। नमी युक्त जमीन में काफी देर तक गर्मी रहती है तथा भूमि का तापमान कम नहीं होता है।

महत्वपूर्ण है छत्रक प्रबंधन

राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में कटहल की खेती

पूजा जाट, जितेंद्र सिंह, कुमारी मनीषा एवं धनेश्रा कुमारी गुर्जर
उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़, कृषि विश्वविद्यालय कोटा

परिचय : कटहल का पौधा एक सदाबहार, 8–15 मी. ऊँचा बढ़ने वाला, फैलावदार एवं घने क्षेत्रकयुक्त बहुशाखीय वृक्ष होता है। भारत वर्ष में इसकी खेती पूर्वी एवं पश्चिमी घाट के मैदानों, उत्तर–पूर्व के पर्वतीय क्षेत्रों, छोटानागपुर के पठारी क्षेत्रों, बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बंगाल के मैदानी भागों में मुख्य रूप से की जाती है। कटहल के वृक्ष की छाया में कॉफी, इलाइची, काली मिर्च, जिमीकंद हल्दी, अदरक इत्यादि की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

स्वाद एव पौष्टिकता की दृष्टि से कटहल का फल अत्यंत ही महत्वपूर्ण माना जाता है। इसके फल बसंत ऋतु से वर्षा ऋतु तक उपलब्ध होते हैं। कटहल के छोटे एवं नवजात मुलायम फल एक प्रमुख एवं स्वादिष्ट सब्जी के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। जैसे–जैसे फल बड़े होते जाते है इनमें गुणवत्ता का विकास होता जाता है एवं परिपक्व होने पर इसके फलों में शर्करा, पेक्टिन, खनिज पदार्थ एवं विटामिन 'ए' का अच्छा विकास होता है।

कटहल से मिलने वाले लाभ

1. कटहल में विटामिन ए, सी, थाइमिन, कैल्शियम, राइबोफ्लेविन, आयरन, जिंक आदि पौष्टिक तत्व पाए जाते हैं
2. कटहल का पल्प का जूस हार्ट की बीमारियों में लाभदायक होता है
3. कटहल की पोटैशियम की मात्रा अधिक पायी जाती है जिससे ब्लड प्रेशर कंट्रोल में रहता है
4. रेशेदार सब्जी व फल होने के कारण कटहल से एनीमिया रोग में लाभ मिलता है
5. कटहल की जड़ उबाल कर पीने से अस्थमा रोग में लाभ मिलता है
6. थायरायड रोगियों के लिए भी कटहल काफी लाभकारी होता है
7. कटहल से हड्डियों को मजबूत करता है ऑस्टियोपोरोसिस के रोगों से बचाता है
8. कटहल में विटामिन ए और सी पाये जाने के कारण वायरल इंफेक्शन में लाभ मिलता है
9. अल्सर, कब्ज व पाचन संबंधी रोगों में भी कटहल फायदेमंद साबित होता है
10. कटहल में विटामिन ए पाये जाने के कारण आंखों की रोशनी भी बढ़ती है।

उन्नत किस्में : कटहल एक परपरागित फल वृक्ष होने तथा प्रमुखतः बीज द्वारा प्रसारित होने के कारण इसमें प्रचुर जैव विविधता है। अभी तक कटहल की कोई मानक प्रजाति का विकास नहीं हुआ था परन्तु फलन एवं गुणवत्ता का आधार पर विभिन्न शोध केन्द्रों द्वारा कटहल की कुछ उन्नतशील चयनित प्रजातियाँ इस प्रकार हैं:

संस्थान	विकसित प्रजातियाँ
बागवानी एवं कृषि–वानिकी शोध कार्यक्रम, राँची	खजवा, स्वर्ण मनोहर, स्वर्ण पूर्ति (सब्जी के लिए)
नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि., फैजाबाद	एन.जे.–1, एन.जे.–2, एन.जे.–15 एवं एन.जे.–3
केरल कृषि वि.वि., तिरुअनन्तपुरम	मत्तमवक्का

खजवा : इस किस्म के फल जल्दी पक जाते हैं। यह ताजे पके फलों के लिए एक उपयुक्त किस्म है।

स्वर्ण मनोहर : छोटे आकार के पेड़ में बड़े–बड़े एवं अधिक संख्या में फल देने वाली यह एक किस्म हैं। इसके लगभग 15 वर्ष के पेड़ की ऊँचाई 5.5 मीटर, तने की मोटाई 86 सें.मी., क्षत्रक फैलाव 25.4 वर्ग मी. तथा पेड़ का आयतन 71.2 घन मी. होता है। मध्यम घने क्षत्रक वाले इस किस्म में फरवरी के प्रथम सप्ताह में फल लग जाते हैं जिनको छोटी अवस्था में बेचकर अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है। फल लगने के 20–25 दिन बाद इसके एक पेड़ से 45–50 कि.ग्रा. फल सब्जी के लिए प्राप्त किया जा सकता है। इस किस्म के पूर्ण रूप से विकसित फल की लम्बाई 45.2 सें.मी., परिधि 70 से.मी. तथा वजन 15–20 कि. ग्रा. होता है। इसके कोये (फलैक्स) का आकार बड़ा (6.0. 3.9 सें.मी.), संख्या अधिक (280–350 कोये/फल) तथा मिठास ज्यादा (20 डि. ब्रिक्स) होता है। यह किस्म छोटानागपुर एवं संथाल परगना तथा आस–पास के क्षेत्र के लिए अधिक उपयुक्त पाई गई है। इसकी प्रति वृक्ष औसत उपज 350–500 कि.ग्रा. (पकने के बाद) है।

स्वर्ण पूर्ति : सब्जी के लिए उपयुक्त किस्म है। इसका फल छोटा (3–4 कि.ग्रा.), रंग गहरा हरा, रेशा कम, बीज छोटा एवं पतले आवरण वाला तथा बीच का भाग मुलायम होता है। इस किस्म के फल देर से पकने के कारण लंबे समय तक सब्जी के रूप में उपयोग किये जा सकते हैं। इसके वृक्ष छोटे तथा मध्यम फैलावदार होते हैं जिसमें 80–90 फल प्रति वर्ष लगते हैं।

मिट्टी एवं जलवायु

कटहल के पौधे लगभग सभी प्रकार के भूमि में पनप जाते हैं परन्तु अच्छी जल निकास की व्यवस्था वाली गहरी दोमट मिट्टी इसके बढ़वार एवं पैदावार के लिए उपयुक्त होती है। मध्यम से अधिक वर्षा एवं गर्म जलवायु वाले क्षेत्र कटहल के खेती के लिए उपयुक्त होते है। इसकी बागवानी शुष्क तथा शीतोष्ण दोनों जलवायु में बागवानी सफलता पूर्वक किया जाता है। इसके साथ पहाड़ो तथा पठारों पर बागवानी किया जाता है।

पौधा प्रसारण

कटहल मुख्य रूप से बीच द्वारा प्रसारित किया जाता है एक समान पेड़ तैयार करने के लिए वानस्पतिक विधि द्वारा पौधा तैयार करना चाहिए। वानस्पतिक विधि में कलिकायन तथा ग्रैफ्टिंग अधिक सफल पायी गयी है। इस विधि से पौध तैयार करने के लिए मूल वृंत की आवश्यकता होती है जिसके लिए कटहल के बीजू पौधों का प्रयोग किया जाता है। मूल वृंत को तैयार करने के लिए ताजे पके कटहल से बीज निकाल कर 400 गेज की 25x 12x 12 सें.मी. आकार वाली काली पॉलीथीन को थैलियों में बुआई करना चाहिए। थैलियों को बालू, चिकनी मिट्टी या बागीचे की मिट्टी तथा गोबर की सड़ी खाद को बराबर मात्रा में मिलाकर बुवाई से पहले ही भर देना चाहिए। चूँकि कटहल का बीज जल्दी ही सूख जाता है अतः उसे फल से निकालने के तुरन्त बाद थैलियों में 4–5 सें.मी. गहराई पर बुआई कर देना चाहिए। उचित देख–रेख करने से मूलवृंत लगभग 8–10 माह में बंडिंग / ग्रैफ्टिंग योग्य तैयार हो जाते है।

कटहल के पौधे को पैच बडिंग या क्लेफ्ट ग्राफ्टिंग विधि द्वारा तैयार किया जा सकता है। पैच बडिंग के लिए मातृ वृक्ष से सांकुर डाली काटकर ले आते हैं जिससे 2–3 सें.मी. लम्बी कली निकाल कर मूलवृंत पर उचित ऊँचाई पर उसी आकार की छाल हटाकर बडिंग कर देते हैं। बडिंग के बाद कली को सफेद पालीथीन की पट्टी (100 गेज) से अच्छी तरह बांध देते हैं तथा मूलवृंत का ऊपरी भाग काट देते हैं। ग्रैफ्टिंग विधि से पौधा तैयार करने के लिए मातृ वृक्ष पर ही सांकुर डाली की पत्तियों को लगभग एक सप्ताह पहले पर्णवृंत छोड़कर काट देते हैं। जब पत्ती का पर्णवृंत गिरने लगे तब सांकुर डाली को काटकर ले आते है। मूलवृंत को उचित ऊँचाई पर काट देते हैं तथा उसके बीचो–बीच 3–4 सें.मी. लम्बा चीरा लगा देते हैं। सांकुर डाली के निचले भाग को दोनों तरफ से 3–4 सें.मी. लगा कलम बनाते हैं जिसे मूलवृंत के चीरे में घुसाकर 100 गेज मोटाई की सफेद पालीथीन की पट्टी से बांध देते है। छोटानागपुर क्षेत्र में बडिंग के लिए फरवरी–मार्च तथा ग्राफ्टिंग के लिए अक्टूबर–नवम्बर का महीना उचित पाया गया हैजड़ से पांच–छह फीट तक तनों व शाखाओं को काट कर पेड़ को सीधा बढ़ने देना चाहिये। उसके बाद चार–पांच तनों को फैलने देना चाहिये। इस तरह से पेड़ का ढांचा अच्छी तरह से विकसित हो जाता है तो अधिक फल लगते हैं।

पौधा रोपण एवं देखरेख

कटहल का पौधा आकार में बड़ा तथा अधिक फैलावदार होता है अतः इसे 10 x 10 मी. की दूरी पर लगाया जाता है। पौध रोपण के लिए समुचित रेखांकन के बाद निर्धारित स्थान पर मई–जून के महीने में 1 x 1 x 1 मीटर आकार के गड्ढे तैयार किये जाते हैं। गड्ढा तैयार करते समय ऊपर की आधी मिट्टी एक तरफ तथा आधी मिट्टी दूसरी तरफ रख देते हैं। इन गड्ढों को 15 दिन खुला रखने के बाद ऊपरी मिट्टी दूसरी तरफ रख देते हैं। इन गड्ढों को 15 दिन खुला रखने के बाद ऊपरी मिट्टी में 20–30 कि. ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद, 1–2 कि.ग्रा. करंज की खली तथा 100 ग्रा.एन.पी. के मिश्रण अच्छी तरह मिलाकर भर देना चाहिए। जब गड्ढे की मिट्टी अच्छी तरह दब जाये तब उसके बीचो–बीच में पौधे के पिण्डी के आकार का गड्ढा बनाकर पौधा लगा दें। पौधा लगाने के बाद चारों तरफ से अच्छी तरह दबा दें और उसेक चारों तरफ थाला बनाकर पानी दें। यदि वर्षा न हो रही हो तो पौधों को हर तीसरे दिन एक बाल्टी (15 लीटर) पानी देने से पौध स्थापना अच्छी होती है।

पौधा लगाने के बाद से एक वर्ष तक पौधों की अच्छी देख–रेख करनी चाहिए। पौधों के थालों में समय–समय पर खरपतवार निकाल कर निराई–गुड़ाई करते रहना चाहिए। पौधों को जुलाई–अगस्त में खाद एवं उर्वरक तथा आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। नये पौधों में 3 वर्ष तक उचित ढांचा देने के लिए काट–छांट करना चाहिए ढांचा देते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि तने पर 1.5–2.0 मी. ऊँचाई तक किसी भी शाखा को नहीं निकलने दें। उसके ऊपर 3–4 अच्छी शाखाओं को चारों तरफ बढ़ाने देना चाहिए जो पौधों का मुख्य ढांचा बनाती हैं। कटहल के पौधों के मुख्य तनों एवं शाखाओं से निकलने वाले उसी वर्ष के कल्लों पर फल लगता है। अतरू इसके पौधों में किसी विशेष काट–छांट की आवश्यकता नहीं होती है। फल तोड़ाई के बाद फल से जुड़े पुष्पवृंत टहनी को काट दें जिससे अगले वर्ष अच्छी फलत हो सके। पुराने पेड़ों पर पनपने वाले परजीवी जैसे बांदा (लोरेन्थस), सूखी एवं रोगग्रस्त शाखाओं को समय–समय पर निकालते रहना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

कटहल के पेड़ में प्रत्येक वर्ष फलन होती है अतः अच्छी पैदावार के लिए पौधे को खाद एवं उर्वरक पर्याप्त मात्रा में देना चाहिए। प्रत्येक पौधे को 20–25 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद, 100 ग्रा. यूरिया, 200 ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट तथा 100 ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति वर्ष की दर से जुलाई माह में देना चाहिए। तत्पश्चात पौधे की बढ़वार के साथ खाद की मात्रा में वृद्धि करते रहना चाहिए। जब पौधे 10 वर्ष के हो जाये तब उसमें 80–100 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 1 कि.ग्रा. यूरिया, 2 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट तथा 1 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति वर्ष देते रहना चाहिए। खाद एवं उर्वरक देने के लिए पौधे के क्षत्रक के नीचे मुख्य

तने से लगभग 1–2 मी. दूरी पर गोलाई में 25–30 सें.मी. गहरी खाई में खाद के मिश्रण को डालकर मिट्टी से ढक देना चाहिए।

पुष्पण एवं फलन

कटहल एक मोनोसियस पौधा है जिसमें नर एवं मादा पुष्पक्रम (स्पाइक) एक ही पेड़ पर परन्तु अलग–अलग स्थानों पर आते हैं। नर फूल, जिसकी सतह अपेक्षाकृत चिकनी होती है, नवम्बर–दिसम्बर में पेड़ की पतली शाखाओं पर आते हैं। ये फूल कुछ समय बाद गिर जाते हैं। मादा फूल मुख्य तने एवं मोटी डालियों पर जनवरी–फरवरी में आते है। मादा फूल अधिक ओजपूर्ण वृंत, जिसे 'फुटस्टॉक' कहते है, पर एकल एवं गुच्छे में आते हैं जिनके साथ नर पुष्प भी निकलते हैं। कटहल एक परपरागित फल है जिसमें परागण समकालीन नर पुष्प से ही होता है। यदि मादा फूल में समान परागण नहीं होता है तो फल विकास सामान्य नहीं होता है। परागण के पश्चात पुष्पक्रम का आधार, अंडाशय और दलाभ एक साथ विकसित होकर संयुक्त फल का विकास होता है। फल जनवरी–फरवरी से जून–जुलाई तक विकसित होते रहते हैं। इसी समय में फल के अंदर बीज, कोया इत्यादि का विकास होता है और अंततरू जून–जुलाई में फल पकने लगते हैं।

सिंचाई कब करें ?

शुरुआत में पौधो को पानी देते रहना होगा। शुरुआत के कुछ वर्ष तक गर्मी के मौसम में प्रति सप्ताह तथा सर्दी के मौसम में 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। अगर पौधा बड़ा हो गया है तो गर्मी के दिनों में प्रत्येक 15 दिन में तथा सर्दी के मौसम में 1 लम्ह में सिंचाई करना चाहिए। नवम्बर दिसम्बर माह में कटहल के पौधों में फूल लगता है इसलिए इन दो माह में सिंचाई नहीं करें।

निदाई गुडाई करना

कटहल के पौधों को निदाई गुडाई करके साफ रखना चाहिए। बड़े पेड़ों के बागों की वर्ष में दो बार जुताई करनी चाहिए। कटहल के बाग में बरसात आदि पानी बिलकुल नहीं जमना चाहिए।

अंतरफल

जब पौधा छोटा छोटा रहता है तो पौधों के बीच काफी जगह खाली रहता है। इसके बीच में अन्य फसल भी प्राप्त कर सकते हैं। दलहन, फसलें तथा सब्जी वाली फसलें तथा फलों में पपीता, अन्नास व फालसा भी लगाया जा सकता है।

कीट रोग एवं नियंत्रण

तना वेधक

इस कीट के नवजात पिल्लू कटहल के मोटे तने एवं डालियों में छेद बनाकर नुकसान पहुँचाते हैं। उग्रता की अवस्था में मोटी–मोटी शाखायें सूख जाती हैं एवं फसल को प्रभावित करती है। इसके नियंत्रण के लिए छिद्र को किसी पतले तार से साफ करके नुवाक्रान का घोल (10 मि.ली./ली.) अथवा पेट्रोल या किरोसिन तेल के चार–पाँच बूंद रुई में डालकर गीली चिकनी मिट्टी से बंद कर दें। इस प्रकार वाष्पीकृत गंध के प्रभाव से पिल्लू मर जातें हैं एवं तने में बने छिद्र धीरे–धीरे भर जाते है।

गुलाबी धब्बा

इस रोग में पत्तियों को निचली सतह पर गुलाबी रंग का धब्बा बन जाता है जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया प्रभावित होती है और फल विकास सुचारू रूप से नहीं हो पाता। इसके नियंत्रण के लिए कॉपर जनित फफूंद नाशी जैसे कॉपर आक्सीक्लोराइड या ब्लू कॉपर के 0.3ः घोल का पणीय छिड़काव करना चाहिए।

फल सड़न रोग

यह रोग राइजोपस आर्टोकार्पी नामक फफूंद के कारण होता है जिसमें नवजात फल डंठल के पास से धीरे–धीरे सड़ने लगते हैं। कभी–कभी विकसित फल को भी सड़ते हुए देखा गया है। इसके नियंत्रण के लिए फल लगने के बाद लक्षण स्पष्ट होते ही ब्लू कॉपर के 0.3ः घोल का दो छिड़काव 15–20 दिनों के अंतराल पर करें।

परिपक्वता एवं उपज

कटहल के फलों को विकास के साथ कई प्रकार से उपयोग में लाया जाता है अतः इसकी परिपक्वता एवं तोड़ाई को उपयोग के आधार पर कई वर्गो में बांटा जा सकता है। अतिनवजात एवं मध्यम उम्र के फल, जिसे सब्जी के लिए प्रयोग किया जाता है, को उस समय तोड़ना चाहिए जब उसके डंठल का रंग गहरा हरा, गूदा कठोर और कोर मलायम हो। इसके साथ–साथ बाजार में मांग के आधार पर तोड़ाई को नियंत्रित कर सकते हैं। कटहल के पूर्ण विकसित फल पेड़ पर एवं तोड़ने के बाद भी पकते हैं। अतः ताजा फल खाने के लिए फलों को पूर्ण परिपक्वता पर तोड़ना चाहिए। साधारणतः फल लगने के 100–120 दिनों बाद तोड़ने लायक हो जाते हैं। इस समय तक डंठल तथा डंठल से लगी पत्तियों का रंग हल्का पीला हो जाता है। फल के ऊपर के कांटे विरल हो जाते हैं एवं कॉंटों का नुकीलापन कम हो जाता है। कटहल के कच्चे फल को छड़ी से मारने पर खट–खट एवं पके फल से धब–धब की आवाज आती है। फलों को किसी तेज चाकू से लगभग 10 सें.मी. डंठल के साथ तोड़ने से दूध का बहाव कम हो जाता है। तोड़ते समय फलों के सीधा जमीन पर गिरने से फल फट जाते है इसलिए फल के वृंत को रस्सी से बांध कर धीरे–धीरे नीचे सावधानीपूर्वक उतार कर किसी छायादार स्थान पर रखना चाहिए। फलों के आपस में रगड़ से छिलके के भूरे होने का भय रहता है जिससे फल की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। कटहल के बीजू पौधे में 7–8 वर्ष में फलन प्रारम्भ होता है जबकि कमली पौधों में 4–5 वर्ष में ही फल मिलने लगते है। रोपण के 15 वर्ष बाद पौधा पूर्ण विकसित हो जाता है। ऐसा देखा गया है कि जिन वृक्षों में छोटे आकार के फल लगते हैं उनमें संख्या अधिक एवं जिन वृक्षों के फल का आकार बड़ा होता है उनमें फलों की संख्या कम होती है। एक पूर्ण विकसित वृक्ष से लगभग 150 से 250 कि.ग्रा. फल प्रति वर्ष प्राप्त होता है।

चाइना एस्टर फूल की फसल: एक लाभदायक व्यवसायिक अवसर

कंचन मीणा, आशुतोष मिश्र एवं रूपराज कंवर
पुष्प एवं भूदृश्य निर्माण विज्ञान विभाग, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

चाइना एस्टर फूल की फसल एक महत्वपूर्ण व्यवसायिक फसल है, जो अपने सुंदर और आकर्षक फूलों के लिए जानी जाती है। चाइना एस्टर के फूल को कट फ्लावर और लूज फ्लावर के रूप में प्रयोग किया जाता है। कट फ्लावर बुके आदि बनाने में और लूज फ्लावर माला आदि बनाने में प्रयोग किया जाता है।

चाइना एस्टर की फसल एक वर्षीय फसल है, जो 120–150 दिनों में तैयार हो जाती है। यह रबी सीजन की फसल है। इसके लिए अच्छी तरह से जल निकासी वाली मिट्टी की आवश्यकता होती है एवं यह फसल विभिन्न प्रकार के फूलों के रंगों में आती है। जैसे– सफेद, गुलाबी आदि।

बीज दर: भारत में चाइना एस्टर की खेती के लिए बीज दर 2.5–3.0 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है।

बीज लगाने का समय : चाइना एस्टर की खेती के लिए उपयुक्त समय क्षेत्र के अनुसार भिन्न होता है। उत्तर भारत में सितंबर–अक्टूबर में बीज लगाना उपयुक्त होता है, जबकि दक्षिण भारत में अगस्त–सितंबर या जनवरी फरवरी में बीज लगाना उचित होता है। यह समय तापमान और मौसम की स्थितियों के आधार पर भिन्न हो सकता है।

जलवायु : चाइना एस्टर को ठंडी जलवायु पसंद है। भारत में सर्दियों के मौसम में अच्छी गुणवत्ता वाले फूल प्राप्त किये जा सकते है। परन्तु समशीतोषण जलवायु जहां तापांतर कम होता है, लंबे समय तक इसकी खेती की जा सकती है। इसके लिए दिन का तापमान 20–30 डिग्री सेल्सियस और रात्री का तापमान 15–17 डिग्री सेल्सियस तथा आर्द्रता 50–60 प्रतिशत होनी चाहिए। पौधों की वृद्धि और फूल आने के लिए खिली धूप आवश्यक है। धूप वाले स्थान पर इसका उत्पादन अधिक होता है।

प्रजनन और पौधशाला स्थापना : चाइना एस्टर का प्रजनन बीज द्वारा किया जाता है। उच्च गुणवत्ता युक्त नर्सरी/पौधशाला तैयार करने के लिए एक मीटर चौड़ी लगभग 11–12 क्यारियां तैयार की जाती है। क्यारी में दो पंक्तियों में 4–6 से.मी की दूरी रखते हुए बीज की बुवाई की जाती है। बीज के अंकुरित होने तक अखबार से क्यारियों को ढक दिया जाता है तथा बीज अंकुरित होने पर हटा दिया जाता है।

मिट्टी की तैयारी : चाइना एस्टर को 6.5–7.5 पी. एच. मान तथा अच्छी जल निकासी वाली उपजाऊ मिट्टी में आसानी से उगाया जा सकता है। पौधा रोपण से पूर्व मिट्टी की 2–3 गहरी जुताई करनी चाहिए। फिर बड़े ढेलों को तोड़ देना चाहिए। जलभराव की समस्या से बचाव के लिए मिट्टी को समतल करना चाहिए।

रंगों के अनुसार व्यावसायिक किस्में

1. **गुलाबी रंग की किस्में :** अर्का अध्या, कामिनी, फूले गणेश गुलाबी आदि।
2. **बैंगनी रंग की किस्म :** अर्का निराली, फूले गणेश बैंगनी, अर्का शुभी, वॉयलेट कुशन आदि।
3. **सफेद रंग की किस्में :** अर्का अर्चना, अर्का शषांक, अर्का पूर्णिमा, फूले गणेश व्हाइट आदि।

पौधारोपण : भारत में रोपाई का समय विभिन्न स्थानों की जलवायु पर निर्भर करता है। भारत के दक्षिण–पूर्वी क्षेत्र (झालावाड़–कोटा) में सितंबर–अक्टूबर उपयुक्त है। चाइना एस्टर पौध की रोपाई तब की जाती है जब बीज बुवाई के 40–45 दिनों के बाद पौधें में 4 –6 पत्तियाँ आ जाती है। पौधारोपण सामान्यतः शाम को करना चाहिए। पौधों को 30 x 30 से.मी. की दूरी पर लगाया जाता है। रोपाई के बाद एक सप्ताह तक पौधे को उचित वृद्धि के लिए सुबह या शाम को सीमित मात्रा में पानी दिया जाता है।

खाद एवं सिंचाई– पौधों की बेहतर वृद्धि और गुणवत्ता युक्त फूल उत्पादन के लिए भूमि की तैयारी के समय प्रति हैक्टेयर 10 से 15 टन अच्छी तरह सड़ी हुई खाद डालनी चाहिए। इसके अतिरिक्त N : P : K, 90 % 60% 60 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से देनी चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा खेत की तैयारी के समय तथा शेष आधी मात्रा 40–45 दिनों के पश्चात् खड़ी फसल में देनी चाहिए। मिट्टी की दशा को ध्यान में रखकर फसल को नियमित रूप से पानी देना चाहिए। लेकिन पानी को बहुत अधिक या बहुत कम मात्रा में भी नहीं देना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण : समय–समय पर निराई–गुड़ाई करके मिट्टी को खरपतवार मुक्त करना चाहिए। खेत की तैयारी के समय हैरो से हल्की जुताई कर खरपतवार नष्ट करते है।

पिचिंग : रोपाई के 30–40 दिनों बाद पौधें के शीर्ष भाग को हाथ से हटा दे ताकि पार्श्व से नए अंकुर तेजी से निकले और पौधा बेहतर ढंग से बढ़वार करें, जिसके परिणामस्वरूप अच्छी गुणवत्ता के अधिक फूल आ सके।

फूलों की तुड़ाई : रोपण के 50–60 दिनों बाद फूल आना शुरू हो जाते है। चाइना एस्टर के फूलों को सुबह जल्दी या देर शाम को खपत के अनुसार काटें। ढीले फूलों को पूरी तरह खिलने पर बिना तने के काट देना चाहिए, जबकि तने वाले फूलों के लिए 30 से.मी. तक तने के साथ काटना चाहिए।

उपज : चाइना एस्टर की उपज आमतौर पर 150–200 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है। लेकिन यह फसल की किस्म, मौसम, मिट्टी और खेती की विधियों पर निर्भर करती है।

कीट व्याधि एवं उपचार

1. **सेमीलूपर :** सेमीलूपर पत्तियों को खाते है इसके लिए क्विनाल्फोस 1.0 मिली./लीटर कार्बारिल 1 ग्राम/लीटर का छिड़काव करें।
2. **लीफ माइनर :** (पत्ती खाने वाले कीट)– यह पत्तियों को खाते है तथा क्षतिग्रस्त पत्तियां विकृत हो जाती है। इसके लिए मोनोक्रोटोफोस 0.5 मिली/लीटर या ऐमिडाक्लोरोपिड 0.5 मिली/लीटर का छिड़काव करें।

रोग एवं उपचार

1. कॉलर एवं जड़ सड़ : कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.5 ग्राम/लीटर के साथ मिट्टी में ड्रेन्चिंग (भिगाना) करें।

2. फ्युजेरियम विल्ट : इस रोग के बचाव के लिए मरक्यूरिक्लोराइड के 0.1 प्रतिशत घोल में 30 मिनट के लिए बीजों को भिगाकर पौधशाला में बीज रोपित करते है। कार्बेनडाजिम 01.0 ग्राम/लीटर के साथ मिट्टी में ड्रेन्चिंग (भिगाना) करें।

बीज संग्रह : चाइना एस्टर के फूलों से गुणवत्तायुक्त बीज प्राप्त करने के लिए फूलों को सुखाकर, उनसे बीज अलग करके बीजों को छाया में सुखाना चाहिए। फिर एक वायुरोधी एल्युमिनियम थैली में भरकर 6–7 माह तक ठंडे और शुष्क स्थान पर संग्रहित करना चाहिए।

***

गुलाब की व्यावसायिक खेती में आधुनिक तकनीकों की भूमिका

प्रहलाद सहाय शर्मा, रोनक कूड़ी, मनोहर लाल मीणा एवं मयंक शर्मा
उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि विश्वविद्यालय- जोधपुर

फूलों की दुनिया में गुलाब का सर्वोत्तम स्थान है। गुलाब एक सर्वाधिक लोकप्रिय पुष्प है। आयुर्वेद में भी गुलाब की विशेषता का वर्णन किया गया है। गुलाब को फूलों की रानी कहा गया है। यह दक्षिणी एशिया, चीन, जापान, उत्तरी अमेरिका, उत्तरी पूर्वी अफ्रीका और भारत के मैदानी व पर्वतीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। गुलाब कट फ्लावर, लूज फ्लावर, गुलकंद, सुगंधित तेल इत्यादि उद्देश्यों के लिए उगाया जाता है। सभी व्यावसायिक तौर पर महत्वपूर्ण पुष्पों में गुलाब दुनिया में पहले स्थान पर है। सुगंधित वर्ग के गुलाब की प्रजातियों का उपयोग लूज फ्लावर, तेल, कंक्रीट, गुलाब जल इत्यादि के लिए किया जाता है।

गुलाब बहुवर्षीय पौध है। इसके पौधें की अच्छी बढ़वार के लिए आवश्यकतानुसार जलवायु का होना अति आवश्यक है। पौध रोपण के समय वातावरण का ठण्डा होना जरूरी है। जलवायु के अन्तर्गत प्रकाश, तापमान, आपेक्षिक आर्द्रता एवं कार्बन डाइऑक्साइड की सान्द्रता पौधे की वृद्धि एवं विकास के लिए बहुत ही आवश्यक है।

प्रकाश

प्रकाश का गुलाब के पौधें के वृद्धि एवं विकास पर बहुत ही प्रभाव पड़ता है। गुलाब को न ही कम एवं अधिक प्रकाश अवधि की आवश्यकता है बल्कि अधिक प्रकाश की तीव्रता होनी चाहिए। प्रकाश की तीव्रता तथा तापमान कम हो तो गुलाब में पुष्प नहीं आता है।

तापमान

गुलाब के पौधें के वृद्धि एवं पुष्पन पर तापमान का बहुत प्रभाव देखा गया है। इसके पौधें की अच्छी बढ़वार के लिए दिन का तापमान 24 से 29 डिग्री सें.ग्रे. होना चाहिए तथा जब बादल हो उस समय 18 से 21 डिग्री सें.ग्रे. तापमान होना चाहिए।

आर्द्रता

गुलाब का पुष्प उत्पादन करने के लिए अधिक वर्षा वाले क्षेत्रा का चयन नहीं करना चाहिए। वर्षा अधिक होने पर वातावरण में आर्द्रता बढ़ जाने के कारण कवक से होने वाले रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है। वातावरण में आर्द्रता कम एवं अधिक होना गुलाब के लिए हानिकारक होता है। आर्द्रता कम होने पर गुलाब के पौधें पर लाल मकडी का प्रकोप बढ़ जाता है।

कार्बन डाइऑक्साइड

वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड का होना पौधें के बढ़वार के लिए बहुत जरूरी है। कार्बन डाइऑक्साइड की उचित सांद्रता होने पर पौधें में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बढ़ जाती है एवं पौधे अधिक मात्राा में भोजन बनाते हैं। कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता के साथ प्रकाश का होना पौधें की बढ़वार के लिए बहुत ही जरूरी है। मिट्टी तथा क्यारी की तैयारी गुलाब की खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है। बलुई दोमट मिट्टी जिसमें कार्बनिक पदार्थ की मात्राा भरपूर हो, गुलाब की खेती के लिए सर्वोत्तम पायी गयी है। मिट्टी का पीएच मान 5.5 से 6.6 के बीच में होना चाहिए। मिट्टी परीक्षण के उपरान्त पोषक तत्व की उपलब्ध मात्राा के अनुसार अतिरिक्त, गोबर की सड़ी खाद, नाइट्रोजन, फॉस्पफोरस, पोटाश एवं सूक्ष्म पोषक तत्व हेतु उर्वरकों को मिट्टी में मिलाना चाहिए। खुले खेत में गुलाब की गुणवत्ता पुष्प उत्पादन के लिए 4 से 5 मीटर चौड़ी एवं सुविधनुसार लम्बी क्यारियां बनानी चाहिए।

प्रवर्धन

कलम विधि द्वारा

कलम की लम्बाई औसत 9 इंच एवं मोटाई पेंसिल जैसी रखी जाती है। कलमों में अच्छी जड़ के फुटाव के लिए एनएए, आईबीए, आईएए इत्यादि जैसे जड़ों को बढ़ावा देने वाले वृद्धि नियामकों का उपयोग किया जाता है। कलमों में अच्छी तरह जड़ें एवं तना विकसित होने के बाद अन्य स्थान पर रोपित कर देना चाहिए। कलम द्वारा तैयार पौधे पुष्प उत्पादन में कम समय लेते हैं।

पौध रोपण

गुलाब का पौध रोपण करते समय दिन का तापमान 24 से 27 डिग्री सेंटीग्रेड तथा रात का तापमान 13 से 19 डिग्री सेंटीग्रेड के मध्य होना चाहिए। मैदानी क्षेत्रा में गुलाब का रोपण अक्टूबर से नवम्बर तथा फरवरी से मार्च माह में किया जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों में गुलाब के रोपण का समय सितम्बर से अक्टूबर तथा मार्च उपयुक्त होता है। पौध रोपण के एक दिन पहले क्यारियों को हल्का नम कर देना चाहिए।

सिंचाई

बरसात एवं जाड़ों के मौसम में कम सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। पानी की मात्राा पौधें की वृद्धि एवं विकास तथा सूर्य की रोशनी की तीव्रता पर निर्भर करती है। गुलाब के पौधें को सिंचाई सुबह 10 बजे से सायं 3 बजे के बीच में कर देनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्राण

महीने में एक बार क्यारियों की ऊपरी सतह की मिट्टी की हल्की गुड़ाई करनी चाहिए। निराई–गुड़ाई करने से मिट्टी भुरभुरी बनी रहती है तथा जल भण्डारण की क्षमता भी बढ जाती है। निराई–गुड़ाई करते समय यह सावधनी रखनी चाहिए कि गुलाब की पतली जड़ें न टूटें इसके लिए हल्की गुड़ाई करनी चाहिए।

पोषण

गुलाब के पौधें की वृद्धि एवं विकास तथा गुणवत्तायुक्त अधिक मात्रा में पुष्प उत्पादन के लिए पोषक तत्वों को टपक सिंचाई के पानी के साथ प्रतिदिन देना चाहिए। पुष्प उत्पादन के दौरान पूर्ण पोषक तत्वों की मात्रा तथा जब पौध सुषुप्तावस्था या पुष्प उत्पादन में न हो उस दौरान पूर्ण पोषक तत्वों के मात्रा की आदि मात्रा देना चाहिए। साधारण तौर पर नाइट्रोजन, फॉस्पफोरस एवं पोटाश को 200 पीपीएम का घोल गुलाब के पौधें के लिए ज्यादा लाभदायक पाया गया है।

कटाई–छंटाई

गुलाब की खेती करने के लिए इसके पौधों की कटाई–छंटाई बहुत ही महत्वपूर्ण है। गुलाब का पौध रोपण के पश्चात पौधों से नयी शाखाएं निकलती हैं। जब पौधों पर अध्कि शाखाएं विकसित हो जाती हैं उसके उपरान्त प्रत्येक पौध्े से 4 से 6 स्वस्थ शाखा को छोड़कर काट देते हैं। इस प्रकार नये पौधें में कटाई–छंटाई की जाती है। गुलाब के पौधों को काटने–छांटने के उपरांत फपफूंदीनाशक कैप्टॉन 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

कीट

एफिड

ये एक रस चूसने वाले कीट हैं। ये पत्तियों, तना तथा पुष्प कलियों का रस चूसते हैं। इनकी रोकथाम के लिए मैलाथियान 1.5–2.0 मि.ली./ली. पानी में घोलकर गुलाब के पौधें पर छिड़काव करना चाहिए।

लाल मकड़ी

यह कीट भी पत्तियों से रस चूसने का काम करती है इसके कारण प्रभावित पौधों की पत्तियां हरे से सफेद रंग में बदलने लगती हैं। गुलाब के पौधें पर हिलफोल 1 मि.ली./ली. पानी में डालकर छिड़काव करने से लाल मकड़ी की समस्या धीरे–धीरे समाप्त हो जाती है।

थ्रिप्स

थ्रिप्स एक सूक्ष्म आकार का भूरा रंग का कीट है। इसका प्रकोप गर्मी के मौसम में ज्यादा होता है। यह पफूल के अन्दर रहने वाला कीट है। इसकी रोकथाम के लिए रोगर 1.0 मि.ली./ली. पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

रेड स्केल

ये कीट तनों पर चिपककर पौधें से रस चूसते हैं। कुछ समय पश्चात तना सूखने लगता है तथा धीरे–धीरे गुलाब के पौधे मर जाते हैं। इससे बचाव के लिए रोगर 1–1.5 मि.ली./ली. या मोनोक्रोटोपफॉस 1–1.5 मिली./ली. पानी में घोलकर पौधें पर छिड़काव करना चाहिए।

रोग

पाउडरी मिल्ड्यू

पाउडरी मिल्ड्ष्यू से प्रभावित पौधें के पत्तियों के ऊपरी भाग पर सफेद पाउडर जमा हो जाता है। इसकी रोकथाम के लिए कैराथेन 0.1 प्रतिशत या कलेविजन 0.03 प्रतिशत के घोल का छिड़काव गुलाब के पौधें पर करना चाहिए।

डाउनी मिल्ड्यू

डाउनी मिल्ड्यू से प्रभावित पंक्तियां धीरे–धीरे पीली पड़ती जाती हैं तथा पत्तियों के ऊपरी भाग पर गोल आकृति के काले धब्बे पड़ने लगते हैं। इसकी रोकथाम के लिए रीडोमील 0.2 प्रतिशत या डाईथेन एम–45 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव पौधें पर करना चाहिए।

डाईबैक

पौधें की कटाई–छटाई करने के बाद कटा हुआ भाग नीचे के तरफ सूखता जाता है। यदि इसकी रोकथाम समय पर नहीं हो पाती है तो पौधे मर जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए गुलाब के पौधें की कटाई–छंटाई के उपरान्त बाविस्टिन का 0.2 प्रतिशत का घोल बनाकर पौधें पर छिड़क देना चाहिए।

काला धब्बा

इस रोग से पत्तियों पर काले रंग के धब्बा पड़ जाते हैं तथा पत्तियां झड़ना शुरू हो जाती हैं। इससे प्रभावित गुलाब के पौधें की बढ़वार बिल्कुल ही रुक जाती है। इसके कारण पुष्पन भी बहुत कम होता है। इसकी रोकथाम के लिए कैप्टॉन 0.2 प्रतिशत या बेनलेट 0.1 प्रतिशत के घोल का छिड़काव पौधें पर करना चाहिए।

उपज

गुलाब की खेती से विभिन्न क्षेत्रों में प्रत्येक प्रजाति का उत्पादन भिन्न होता है। यह पूर्णतः उस क्षेत्रा की जलवायु और प्रजाति की उत्पादन क्षमता पर निर्भर करता है। सामान्यतौर पर फ्रलोरीबंडा वर्ग का गुलाब जो खुले फूलों के लिए उपयोग होता है। 3–3.5 क्विं./एकड़ की उपज देता है।

निष्कर्ष

गुलाब की व्यावसायिक खेती में आधुनिक तकनीकों का प्रयोग उत्पादन को अधिक लाभदायक और टिकाऊ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ग्रीनहाउस, पॉलीहाउस, ड्रिप सिंचाई, और एकीकृत कीट एवं रोग प्रबंधन जैसी उन्नत तकनीकों के उपयोग से उत्पादन की गुणवत्ता और मात्रा में वृद्धि होती है। ये तकनीकें न केवल फूलों की गुणवत्ता सुधारती हैं, बल्कि जल, उर्वरकों और अन्य संसाधनों के कुशल प्रबंधन में भी सहायक होती हैं। साथ ही, निर्यात–योग्य गुलाब उत्पादन में इन तकनीकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, जिससे किसानों की आय में वृद्धि होती है। इस प्रकार, आधुनिक तकनीकों के प्रभावी उपयोग से गुलाब की खेती को एक लाभकारी उद्यम में परिवर्तित किया जा सकता है, जो पर्यावरण–संवेदनशील और आर्थिक रूप से लाभदायक होता है।

सजावटी इक्सोरा की उन्नत खेती :एक नई पहल

रूपराज कंवर, आशुतोष मिश्र एवं कंचन मीणा

पुष्प एवं भूदृश्य निर्माण विज्ञान विभाग, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़, (कृषि विश्वविद्यालय कोटा)

इक्सोरा रूबिएसी परिवार से संबंधित एक सुंदर और उपयोगी फूलदार पौधा है। यह पौधा मुख्य रूप से उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पाया जाता है। इसके फूल विभिन्न आकर्षक रंगों में आते है जो की तितिलियों और हमिंगबर्डस को आकर्षित करते है। सजावटी व सुंदर पौधा होने के साथ ही इक्सोरा में विभिन्न प्रकार के औषधीय गुण भी पाये जाते है और इनका उपयोग पारंपरिक हर्बल चिकित्सा में किया जाता है तथा फूल मंदिरों में भगवन को श्रद्धा के रूप में भी चढ़ाये जाते है। इक्सोरा (इक्सोरा कोकसिनिया एल.) आवासीय क्षेत्रों और सार्वजनिक पार्कों के सौंदयीकरण में सबसे अधिक उगायी जाने वाली गर्मी के प्रति सहनशील फूलदार सदाबहार झाड़ी है।

उत्पत्ति एवं वितरण

इक्सोरा पौधे उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पाये जाते है, मुख्य रूप से एशिया में इक्सोरा की उत्पति भारत, श्रीलंका से मानी जाती है। समय के साथ इक्सोरा अपनी मनमोहक सुंदरता और सजावटी मूल्य के कारण इसकी खेती को व्यावसायिक तौर पर दुनियाभर में बढ़ावा दिया जा रहा है। विभिन्न जलवायु के अनुकूल होने के कारण तथा उष्ण प्रतिरोधी होने के कारण इक्सोरा को सभी बगीचों, पार्कों और भू–दृश्य निर्माण में एक लोकप्रिय स्थान दिया जाता है।

प्रजातियाँ : इक्सोरा वंश में कई प्रजातियां शामिल है, जिनमें से प्रत्येक अपनी अलग विशेषता के लिए जानी जाती है।

1. **इक्सोरा कोकसिनिया :** आमतौर पर स्कारलेट इक्सोरा के नाम से जानी जाने वाली यह प्रजाति अपने लाल ट्यूबलर फूलों के लिए प्रसिद्ध है।
2. **इक्सोरा चाइनेसिस :** इसे 'चीनी इक्सोर' या रंगन के नाम से जाना जाता है। इस प्रजाति में लाल, गुलाबी या पीले रंग के फूलों के गुच्छे आते है।
3. **इक्सोरा फिनलेसोनियाना :** इस प्रजाति को 'बौना इक्सोर' या पीला इक्सोरा कहा जाता है। यह पौधा अपने कॉम्पेक्ट आकार व गमलों में पनपने की क्षमता के कारण पसंद किया जाता है।
4. **इक्सोरा जावानिका :** इसमें लाल, गुलाबी, व नारंगी रंग के फूल आते है।
5. **इक्सोरा मैक्रोथाइर्सा :** इसे 'वेस्ट इंडियन जैस्मिन' भी कहा जाता है। यह प्रजाति अपने सुगंधित सफेद रंग के बड़े फूलों के लिए जानी जाती है।
6. **इक्सोरा ताइवानेंसिस :** यह प्रजाति ताइवान की मूल है। इसकी चौड़ी चमकदार पत्तियाँ होती है तथा पीले बड़े फूलों के समूह होते है।

जलवायु : इक्सोरा के पौधे को अच्छे विकास व वृद्धि के लिए पूर्ण सूर्यप्रकाश में उगाया जाना चाहिए। कम तापमान (<-50 C) इक्सोरा के लिए नुकसानदायक होता है।

मिट्टी : अच्छी जल निकास वाली मिट्टी इक्सोरा के लिए ाभदायक होती है। यह अम्ल व नमी प्रेमी पौधा है। सर्वोत्तम विकास के लिए मिटटी का PH -5 होना चाहिए।

रोपण का समय : इक्सोरा के पौधे वसंत ऋतु में लगाये जाते है। रोपण की दूरी 45x60 सेमी.

प्रर्वद्धन : इक्सोरा पौधे मुख्यत वानस्पतिक प्रवर्धन द्वारा तैयार किये जाते हैं।

1. **कटिंग :** वसंत ऋतु में 5–8 सेमी. लंबे तने की कटिंग के माध्यम से नया पौधा तैयार किया जा सकता है। प्रत्येक कटिंग को पत्ति के ठीक नीचे से काटा जाता है तथा पत्ति को हटा दिया जाता है। कटे हुए सिरे को रूटिंग हार्मोन में डुबोकर 5–8 सेमी गमले में रोप देते है व नमी बनाये रखते है।
2. **एयर लेयरिंग :** इक्सोरा पौधे की पेंसिल मोटाई के तने वाले अच्छे शाखीत पौधे का चयन कर छाल को चाकू से साफ कर कटे हिस्से पर कोकोपीट, पीटमॉस और रेत का मिश्रण पर्याप्त मोटाई के साथ लपेट दिया जाता है तथा धागे से बांधकर प्लास्टिक से ढक देते है। मानसून मौसम में जड़े तीन सप्ताह में निकल जाती है। जड़ वाले पौधे को मदर प्लांट से काट कर आंशिक छाया वाले स्थान पर उगाया जाता है। पौधे 2 महिने में स्थापित हो जायेगे और अन्य स्थान पर लगाने के लिए तैयार भी।
3. **सकर्स या अंकुर :** पुराने तैयार पौधों के आधार से नए छोटे सकर्स या अंकुर निकल आते हैं जिनको मदर पौधे से अलग कर नए पौधे के रूप में उगाया जा सकता है यह नया पौधा तैयार करने का एक आसान तरीका है।

किस्में : इक्सोरा पौधे की उन्नत किस्में निम्न है–

1. गुलाबी : एलेम्सियाए एंजेला बुशमेन, डेन्टी लेडी
2. लाल : ब्लैंच, क्रिसमस किंग, फायरब्रान्ड, मार्गरी
3. नारंगी व पीली : एंजेलाए बटर पॉपकॉर्नए जेजेबेलए लेमन शिफॉन
4. सफेद : डियोर हेरेरा वाइट

सिंचाई : इक्सोरा की वाश्पीकरण दर अधिक होने के कारण इसे अधिक नमी व आर्द्र वातावरण की आवश्यकता होती है। 5 से 7 दिन के अंतराल पर सिंचाई आवश्यक होती है।

पोषण : पोषण सक्रीय विकास की अवधि के दौरान हर दो सप्ताह में मानक तरल उर्वरक का प्रयोग करने से अच्छे परिणाम मिलते हैं तथा FYM 10 टन/हेक्टेयर, 10 : 10 : 10 NPK ग्राम/पौधा के हिसाब से दिया जाना चाहिए।

फूलों की तुड़ाई : इक्सोरा के फूलों को गुच्छों में सुबह के समय तोड़कर कम तापमान पर रखा जाता है। निर्यात के लिए कार्ड बोर्ड बक्से में व्यस्थित रखना चाहिए तथा स्थानीय बाजार के लिए बांस की टोकरी या पॉलीथिन बैग का उपयोग किया जाता है।

उपज : इक्सोरा की उपज लगभग 2500 किग्रा/हैक्टेयर प्राप्त की जा सकती है। उच्च गुणवत्ता व लंबी सेल्फ लाईफ की वजह से व्यवसायिक रूप से अच्छी कीमत प्राप्त होती है।

रोग / कीट उपचार

1. लीफ स्पॉट्स सभी किस्मे व प्रजातियाँ इसके प्रति संवेदनशील हैं। नियंत्रण पत्तियों पर कॉपर ओक्सीक्लोराइड 3 ग्राम / लीटर का छिडकाव करें।
2. काली फफूंद : नियंत्रण वाहक सफेद मक्खी और मिली बग्स को नियंत्रित करने के लिए सिस्टमिक कीनाशी का छिडकाव करें।
3. कैटरपिलर नियंत्रण : 70% नीम तेल का छिडकाव लाभदायक है। हाथ से कैटरपिलर को चुनकर अलग करें। स्पीनोसाइड का उपयोग प्रभावी साबित होता है।

❋❋❋

अतिरिक्त आय का साधन- जायद व ग्रीष्मकालीन मूंग उत्पादन : उन्नत तकनीकी

उदिती धाकड़, शालिनी मीणा, सत्यनारायण रेगर एवं एस. एन. मीणा
शस्य विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, उम्मेदगंज, कोटा

दलहनी फसलों में मूंग की बहुमुखी भूमिका है। इससे पौष्टिक तत्व प्रोटीन पर्याप्त होने के कारण स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। मूंग के दानों में 25 प्रतिशत प्रोटीन, 60 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 13 प्रशित वसा तथा अल्प मात्रा में विटामिन सी पाया जाता है। इसमें वसा की मात्रा कम होती है और इसमें विटमिन बी कम्पलेक्स, कैल्शियम, खाद्य रेशा एवं पोटेशियम भरपूर होता है। मूंग 50 से 60 दिनों में तैयार होने वाली जायद सीजन की फसल है। यह बिजाई के बाद करीब 60 से 70 दिनों में कटाई के लिए पूर्ण रूप से तैयार हो जाती है। अगर मूंग की खेती उन्नत किस्म और कृषि विशेषज्ञों की सलाह से की जाये तो इसकी खेती से 10 से 15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। सामान्य विधि से इसकी खेती से औसतन 7 से 8 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की पैदावार होती है।

जायद में रबी व खरीफ के बीच के खाली समय में मूंग की खेती करना किसानों के लिए अतिरिक्त आय का अच्छा स्त्रोत है। सिंचाई की सुविधा वाले खेत पर वर्ष में तीसरी फसल के रूप में जायदमूंग की खेती की जा सकती है। इसकी खेती किसान को अतिरिक्त आय देने के साथ भूमि की उर्वरा शक्ति बनाये रखने में सहायक है।

उन्नत उत्पादन तकनीक

सामयिक बुवाई के साथ पर्याप्त पौधों की संख्या, राइजोबियम कल्चर व कवकनाशी से बीजोपचार, उर्वरक एवं खरपतवार प्रबंधन तथा सिंचाई आदि अपनाकर उत्पादकता में वृद्धि कर सकते है।

जलवायु

मूंग की फसल अधिक तापमान, कम नमी एवं मध्यम वर्षा 60–80 से. मी.वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगायी जाती है। इसके अच्छे अंकुरण के लिये 20–25 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान तथा बढ़वार व फली बनने हेतु 25–40 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान की आवश्यकता होती है। मूंग मुख्य रूप से खरीफ व जायद मौसम में उगाई जाने वाली दलहनी फसल है इसमें सूखा सहन करने की क्षमता अधिक होती है। जलभराव, भारी वर्षा एवं ओलावृष्टि फसल पकाव के समय काफी नुकसान पहुंचाती है। मूंग की फसल को किसी खास तरह के वातावरण की आवश्यकता नही होती है। यह उच्च ताप को आसानी से सहन कर सकती है।

खेत की तैयारी

रबी फसल गेहूं कटाई उपरान्त गेहूँ की नरवाई न जलायें। रोटावेटर अथवा लोहे की भारी चौखटा (नरवाई तोडक घिसटा यंत्र) को खेत में दो–तीन बार आड़ा–तिरछा चलायें इससे नरवाई टूटकर छोटे टुकड़ों में मिट्टी में मिल जायेगी। बुआई से पहले खेत अच्छी तरह तैयार करें। खेत में उचित नमी होने पर ही बुआई करें। भुरभुरे, बारीक व चूर्णिल खेत को मूंग की खेती के लिए अच्छा माना जाता है। खेत की दो तीन बार हैरो से जुताई करें। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगायें जिससे भूमि की नमी संरक्षित बनी रहे। रबी की कटाई के तुरन्त बाद आवश्यकतानुसार एक या दो बार जुताई कर खेत को तैयार कीजिये। अन्तिम तैयारी के समय ध्यान रखिये कि भूमि समतल हो जाये। भूमिगत कीटों व दीमक की रोकथाम हेतु बुवाई से पूर्व क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण 25 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि में मिलायें।

उन्नत किस्में एवं विशेषताएं

के 851 : यह किस्म खरीफ व जायद दोनों के लिए उपयुक्त पाई गई है जो कि 60 से 70 दिन में पककर 8 से 10 क्वि. प्रति है. उपज देती है।

पीडी एम 11 : यह किस्म 60 से 65 दिन में पककर 10 से 12 क्विं. ध्है. उपज देती है।

पीडी एम 139 (सम्राट) : यह किस्म खरीफ व जायद दोनों के लिए उपयुक्त पाई गई है। यह 68–70 दिनों में पककर 6–8 क्विं. / है. औसत उपज देती है। यह किस्म पीतचितरी रोग से अवरोधी पायी गयी है।

आई.पी.एम. 02–3 : यह किस्म खरीफ व जायद दोनों के लिए उपयुक्त पाई गई है। यह 68–70 दिनां में पककर 10–12 क्विं./ है. तक उपज देती है। यह किस्मपीत चितेरी रोग से अवरोधी पायी गयी है।

आई. पी. एम. 410–3 (शिखा) : यह किस्म जायद मौसम के लिए उपयुक्त पाई गई है। यह 13–15 क्विं. / है. तक उपज देती है यह किस्म मूंगपीत चितेरी तथा छाछ्या रोग के प्रति अवरोधी हैं।

बीज उपचार

बुवाई से पहले प्रति किलो बीज को 3 ग्राम थाइरम या आधा ग्राम कार्बेण्डेजिम से उपचारित करें।

राइजोबियम कल्चर से बीज उपचार : बीजों को राइजोबियम से उपचारित करने हेतु आवश्यकतानुसार पानी गर्म करके 300 ग्राम गुड़ का घोल बनायें तथा ठंडा होने पर 600 ग्राम शाकाणु संवर्ध मिला देवें। इस मिश्रण की एक हैक्टेयर में बोये जाने वाली बीजों पर भली–भाँति परत चढ़ा देवे व छाया में सुखा कर बुवाई करें।

खाद एवं उर्वरक

जायद मूंग हेतु 20 किलो नत्रजन व 40 किलो फॉस्फोरस की प्रति हैक्टेयर आवश्यकता होती है। उर्वरक की पूरी मात्रा बुवाई के समय ऊर कर देवें।

बीज एवं बुवाई

जायद मूंग की बुवाई के लिये 15 फरवरी से 15 मार्च तक का समय उपयुक्त होता है। ग्रीष्मकालीन मूंग की बुआई सामान्यतः मार्च के प्रथम सप्ताह से 15 अप्रैल के मध्य करें। गेहूँ आलू और सरसों की कटाई उपरांत 70 से 80 दिनों में पकने वाली प्रजातियों की बुआई की जा सकती है। जिन क्षेत्रों में गेहूं की फसल देर से पकती है या किसी कारणवश खेत समय पर तैयार न हो तो वहां पर मूंग की 60 से 65 दिनों

में पकने वाली किस्मों की बुआई 15 अप्रैल तक कर सकते हैं। ग्रीष्मकालीन मूंग की खेती उन्ही क्षेत्रों में करें जहां पर सिंचाई का पर्याप्त प्रबंध हो।

बुवाई हेतु 15–20 किलो बीज की प्रति हैक्टेयर आवश्यकता होती है। कतार से कतार की दूरी 25–30 सेन्टीमीटर और पौधे से पौधे की दूरी 10–15सेन्टीमीटर रखनी चाहि,। बसंत कालीन / ग्रीष्मकालीन मूंग की बुआई के लिए 20–35 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। ग्रीष्मकालीन मूंग की पंक्तियों से पंक्तियों की दूरी 30 से.मी. रखें। गेंहू कटाई उपरान्त हेरो व कल्टीवेटर के बाद रोटोवेटर चलाएं तथा सूखे में मूंग की बुवाई कर सकते है। बुवाई के पश्चात् तुरन्त फव्वारा सिंचाई कर नमी रखें इस प्रकार अंकुरण अच्छा व शीघ्र प्राप्त होता है। बुआई हमेशा पंक्तियों में करें, जिससे फसल की निराई–गुड़ाई आसानी से की जा सके।

सिंचाई एवं जल प्रबंधन

जायद मूंग की फसल के फूल आने से पूर्व तथा फलियों में दाना बनते समय सिंचाई अत्यन्त आवश्यक है। इसके अतिरिक्त तापमान एवं भूमि की नमी के अनुसार आवश्यकता होने पर अतिरिक्त सिंचाई कर देनी चाहिए। ग्रीष्मकालीन / बसंतकालीन मूंग की अच्छी वृद्धि व विकास के लिए 3.4 सिंचाई आवश्यक है व आवश्यकता अनुसार सिंचाई करते रहे।

जायद मूंग फसल को फव्वारा द्वारा सिंचाई आई. डब्ल्यू/सी.पी.ई. अनुपात 1.2 (8–10 दिन के अन्तराल पर) पर प्रत्येक सिंचाई अवधि 3.0 घण्टे (1.5 घण्टे के उपरान्त 30 मिनिट समय तक फव्वारा बन्द रखें) तथा 125 प्रतिशत संस्तुति उर्वरक की मात्रा द्ध 25 किलो नत्रजन, 50 किलो फास्फोरस, 37 किलो पोटाश प्रति हैक्टेयरऋ एवं थायोसेलिसिलिक अम्ल 100 पी.पी.एम घोलका पर्णीय छिड़काव फूल आने की अवस्था पर करने से 48.0 प्रतिशत अधिक दाना उपज तथा 9.4 प्रतिशत अधिक जल उपयोग दक्षता प्राप्त होती है।

खरपतवार नियंत्रण

जायद मूंग में अधिक उत्पादन के लिए बुवाई के 20–25 दिन के पश्चात् निराई गुड़ाई कर खरपतवार नियंत्रण करना चाहिए। श्रमिकों के अभाव में रसायनिक विधि द्वारा उचित खरपतवार प्रबंधन करने हेतु पेण्डीमेथालीन 30 ई.सी. 1.0 किलो सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेयर की दर से 600 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के पश्चात या अंकुरण से पूर्व छिड़काव करने पर खरपतवारों का प्रभावी नियन्त्रण किया जा सकता है। ग्रीष्मकालीन मूंग में खरपतवारों की कोई विशेष समस्या नहीं रहती है। सामान्यतः फसल की वृद्धि के साथ ही कई प्रकार के चौड़ी व संकरी पत्तियों वाले खरपतवार उग आते हैं, जो फसल को दिए गए पोषक तत्वों व पानी का अवशोषण कर लेते हैं, जिससे मूंग की पैदावार और गुणवत्ता में कमी आ जाती है। इस प्रकार किसान को अपनी फसल का अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाता है। बुआई के प्रथम 20–25 दिनों में खरपतवार फसल से ज्यादा स्पर्धा करते हैं। अतः बुआई के 15–20 दिनों के अंदर निराई–गुड़ाई कर खरपतवारों को नष्ट कर दें। आजकल निराई गुड़ाई के लिए मजदूरों की कम उपलब्धता और उनकी अधिक मजदूरी के कारण खरपतवारों को नियंत्रण करने के लिए बहुत से शाकनाशी बाजार में उपलब्ध हैं। पेंडीमिथालीन 1000 मि.ली. दवा को 600 लीटर पानी में घोलकर छिडकें। फसल की 20–25 दिन की अवस्था पर डोरा या कुल्पा चलायें तथा आवश्यकतानुसार गुड़ाई करें।

फसल संरक्षण

एफिड्स (मोयला) : मैलाथियॉन 50 ईसी या डायमिथोएट 30 ईसी एक लीटर या मैलाथियॉन 5 प्रतिशत चूर्ण का 25 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

फलीछेदक : मोनाक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या क्यूनालफॉस 25 ईसी एक लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़कें।

चित्ती जीवाणु रोग : इस रोग में छोटे गहरे भूरे रंग के धब्बे पत्तों पर तथा प्रकोप बढ़ने पर फलियों और तने पर दिखाई देते हैं। रोग दिखाई देते ही एग्रीमाईसिन 200 ग्राम या 2 किलो ताम्रयुक्त कवकनाशी का प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

पीतशिरा मोजेक (विषाणु रोग) : रोग का प्रकोप दिखने पर डायमिथोएट 30 ईसी का एक लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

छाछ्या रोगः रोग की रोकथाम हेतु प्रति हैक्टेयर ढाई किलो घुलनशील गंधक 0.3 प्रतिशत या एक लीटर डायनोकेप 35 LC (केराथेन एल सी) के 0.1 प्रतिशत घोल का पहला छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई देते ही एवं दूसरा छिड़काव 10 दिन के अंतर पर करें अथवा 25 किलो प्रति हैक्टेयर गंधक चूर्ण का भुरकाव करें।

पीलिया रोगः रोग दिखने पर 0.1 प्रतिशत गंधक के तेजाब या 0.5 प्रतिशत फेरससल्फेट का छिड़काव करें।

फसल की कटाई

फलियों के झड़कर गिरने से होने वाली हानि को रोकने के लिये फसल पकने के बाद किन्तु झड़ने से पहले कटाई कर लेवें।

उपज : इस प्रकार जायद में उन्नत कृषि तकनीक अपनाकर औसतन 8–12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर मूंग की उपज तथा अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है।

***

मवेशियों में परजीवी नियंत्रण के लिए प्रभावी प्रबंधन

विक्रमजीत सिंह, सुरेश चंद कांटवा, अशोक चौधरी एवं गुलाब चौधरी
कृषि विज्ञान केंद्र, हनुमानगढ़-II (नोहर), राजस्थान पशुचिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

दूध देने वाले पशुओं में परजीवी रोग से निपटने के लिए, मिनाशी दवाओं का इस्तेमाल किया जाता है. इसके अलावा, चरागाहों को खाली छोड़ने और दूसरी प्रजातियों को चराने जैसी तरीके भी अपनाए जा सकते हैं। परजीवी रोग से बचने के लिए, अच्छी स्वच्छता का पालन करना और मांस को अच्छी तरह से पकाना भी जरूरी है।

परजीवी रोग से जुड़ी कुछ खास बातें

- परजीवी रोग को पैरासाइटोसिस भी कहा जाता है।
- परजीवी जीव होते हैं जो अपने मेजबान से पोषण लेते हैं और उसे नुकसान पहुंचाते हैं।
- परजीवी रोग से पीड़ित पशुओं में कई तरह के लक्षण दिख सकते हैं।
- परजीवी रोग से पीड़ित पशुओं में भूख न लगना, पेट फूलना, चलने–फिरने में परेशानी, शरीर का चमकहीन होना जैसी समस्याएं हो सकती हैं।

परजीवी रोग से पीड़ित पशुओं का विकास प्रभावित होता है और वे कम उत्पादन देते हैं. टिक्स, पिस्सू, मक्खियाँ, जूँ, घुन जैसे परजीवी मवेशियों के स्वास्थ्य और प्रदर्शन को प्रभावित कर सकते हैं। परजीवी नियंत्रण कार्यक्रम विकसित करना और उसे लागू करना इस प्रभाव को कम करने में मदद कर सकता है। उत्पादकों के लिए कई नियंत्रण रणनीतियाँ उपलब्ध हैं और नीचे कुछ प्रभावी प्रबंधन विकल्पों के बारे में विवरण दिया गया है।

पशुओं को अच्छी शारीरिक स्थिति में रखना और ऐसा आहार देना जो उनकी सभी पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करता हो, परजीवियों के प्रभाव को कम करने का सबसे प्रभावी तरीका है, चाहे वे आंतरिक हों या बाहरी। जो पशु दुबले–पतले हैं या जिनमें खनिज और विटामिन सहित पोषण संबंधी कमियाँ हैं, वे परजीवियों के प्रभाव के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। वे अन्य बीमारियों के प्रति भी अधिक प्रवण होते हैं। यही कारण है कि पशु अक्सर लंबी ठंडी सर्दियों या सूखे के दौरान परजीवियों से अधिक प्रभावित होते हैं, जब पोषण इष्टतम से कम हो सकता है। फीड परीक्षण और किसी भी कमी को ठीक करने से पशुओं को परजीवियों से बेहतर तरीके से निपटने में मदद मिल सकती है।

अधिक भीड़भाड़ एक और महत्वपूर्ण जोखिम कारक है। जब पशु एक–दूसरे के करीब होते हैं तो बाहरी परजीवियों के फैलने की संभावना अधिक होती है। जूँ इसका एक अच्छा उदाहरण है। वे मुख्य रूप से जानवरों के बीच सीधे संपर्क के माध्यम से फैलते हैं, और जानवरों की जितनी अधिक भीड़ होती है, उतनी ही आसानी से वे एक समूह में फैल सकते हैं।

स्टॉकिंग घनत्व आंतरिक परजीवी भार को भी प्रभावित करता है। कीड़े जानवरों द्वारा चरागाह पर चरने के दौरान उठाए जाते हैं। अधिक भीड़भाड़ से पर्यावरण में अधिक खाद जमा हो जाती है, जिससे संक्रामक कृमि लार्वा के साथ चरागाहों का संदूषण बढ़ जाता है। इसके अलावा, जब स्टॉकिंग घनत्व अधिक होता है, तो जानवर मल के पैट के करीब चरते हैं जहां संक्रामक लार्वा सबसे अधिक केंद्रित होते हैं। इससे जानवरों में कृमि का भार अधिक होता है। स्टॉकिंग घनत्व को कम करने से संक्रामक लार्वा के साथ पर्यावरण का संदूषण कम होता है और मल के पैट के करीब चरने की संख्या कम होती है, जिसके परिणामस्वरूप जानवरों में कृमि का बोझ कम होता है।

आंतरिक परजीवी नियंत्रण में चारागाह प्रबंधन भी एक बड़ी भूमिका निभाता है। स्टॉकिंग घनत्व को कम करने के अलावा, चारागाह रोटेशन एक और उपकरण है जिसका उपयोग किया जा सकता है। अधिकांश संक्रामक लार्वा पौधे के निचले हिस्से में, जमीन के करीब पाए जाते हैं। यदि जानवरों को चरने से पहले इस बिंदु से नीचे ले जाया जाता है, तो यह जोखिम के स्तर को सीमित करेगा। साथ ही, यदि चरागाहों को एक मौसम में एक से अधिक बार चराया जाना है, तो अनुक्रम पर विचार करें। पहले छोटे जानवरों को चराने के बाद बड़े जानवरों को चराने से छोटे, अधिक संवेदनशील जानवरों के लिए स्वच्छ चरागाह बचेंगे। बड़े जानवरों ने आमतौर पर कई चराई मौसमों में कीड़ों के प्रति कुछ प्रतिरक्षा हासिल कर ली है और युवा जानवरों के चरने के बाद चरागाह पर बचे लार्वा से कम प्रभावित होंगे।

जब संभव हो, प्रारंभिक चराई के बाद चरागाहों को खाली छोड़ना भी कृमि भार को कम करने में मदद करेगा। जितना अधिक समय आराम में बिताएंगे, उतने ही कम लार्वा बचेंगे। लार्वा अपना जीवनचक्र तभी पूरा करते हैं जब उन्हें कोई जानवर खा लेता है, जहां वे फिर वयस्क बन सकते हैं और प्रजनन कर सकते हैं। जबकि कुछ लार्वा अभी भी उप–भूमि में जीवित रह सकते हैं, उनकी संख्या बहुत कम हो जाएगी।

भेड़ जैसी एक अलग प्रजाति को मवेशियों के बाद चराया जा सकता है, ताकि चरागाह पर मौजूद मवेशियों के परजीवियों को कम किया जा सके। ऐसा इसलिए है क्योंकि मवेशियों के अनुकूल कीड़े अन्य जुगाली करने वाली प्रजातियों में उतने अच्छे से जीवित नहीं रहते हैं, और इसके विपरीत।

व्यक्तिगत जानवर की आनुवंशिकी उन्हें परजीवियों के प्रति अधिक संवेदनशील बना सकती है। यह आम तौर पर स्वीकार किया जाता है कि एक समूह में 20% जानवरों में 80% परजीवी होते हैं, और इस बात के कुछ सबूत हैं कि कम से कम इसका कुछ हिस्सा आनुवंशिकी के कारण होता है। लक्ष्य इन मवेशियों की पहचान करना और उन्हें झुंड से अलग करना होगा। दुर्भाग्य से, हमारे पास उपलब्ध मौजूदा उपकरणों को देखते हुए ऐसा करना आसान नहीं है, लेकिन तकनीक तेजी से बदल रही है, और निकट भविष्य में यह अधिक व्यवहार्य हो सकता है।

हाइड्रोपोनिक चारा : वैकल्पिक चारा उत्पादन तकनीक

सुरेन्द्र कुमार मीणा, प्रभा सिंह, रवि प्रकाश सैनी एवं महर्षि तोमर
भा.कृ.अनुप– भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी, उत्तरप्रदेश

देश की लगभग 70% आबादी कृषि और पशु पालन पर निर्भर है। हरा चारा दुधारू पशुओं को अवश्य खिलाना चाइये जिससे उनको आवश्यक पोषक तत्व मिलते रहे तथा दुग्ध उत्पादन अच्छा हो। पशु पालन के लिए हरे चारे की उपलब्धता बहुत ही महत्वपूर्ण है, लेकिन जमीन एवं पानी की कमी की वजह से वर्ष पर्यत आवश्यक मात्रा में हरे चारे का उत्पादन करना मुश्किल हो जाता है। इस समस्या से बचने के लिये पशु पालक हाइड्रोपोनिक्स विधि से हरे चारे का उत्पादन कर सकते है। इस विधि में बिना मिट्टी के चारा फसलों को पर्याप्त पोषक तत्वों के घोल मे उगाया जाता है। यह शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में चारा उत्पादन के लिए एक बेहतर तकनीक है जिसके द्वारा वर्ष पर्यत उच्च गुणवत्ता वाले हरे चारे की आपूर्ति पूरा किया जा सकता है। इस विधि के द्वारा पशु पालक नियंत्रित वातावरण में जौ, मक्का, ज्वार और जई जैसी चारा फसलों से कम समय में हरा चारा पैदा कर सकता है। इस विधि में नियंत्रित परिस्थितियों (तापमान, आर्द्रता और प्रकाश) में बीजों को अंकुरित करके, 6–10 दिनों के बाद कोमल प्रोंहो को जड़ सहित कटाई कर ली जाती है। इससे हरे चारे की एक चटाई मिलती है जो कि प्रोटीन, विटामिन, किंवक और खनिजों से भरपूर होती है। यह मवेशियों, बकरियों, भेड़, मुर्गी और यहां तक कि जलीय कृषि के लिए बेहतर भोजन के रूप में प्रयोग मे ली जाती है।

हाइड्रोपोनिक्स विधि के मुख्य घटक

1. **पोषक द्रव:** इसमे पोषक द्रव्यो का उपयोग किया जाता है, जो की आवश्यक तत्वों से भरपूर होता है। यह पौधे की वृद्धि के लिए आवश्यक पोषण प्रदान करता है।
2. **सिंचाई प्रणाली :** हाइड्रोपोनिक चारा प्रणालियों में स्वचालित सिंचाई प्रणालियों का उपयोग किया जाता है, ताकि आवश्यक नमी स्तरों को सुनिश्चित किया जा सके।
3. **प्रकाशिकी :** सेटअप के आधार पर, कृत्रिम प्रकाशिकी का उपयोग किया जा सकता है ताकि प्रकाश संश्लेषण प्रकिया के लिए आवश्यक प्रकाश प्रदान किया जा सके, खासकर ऐसे अंदरूनी परिसरों में जहां प्राकृतिक प्रकाश सीमित हो।
4. **तापमान और आर्द्रता नियंत्रण :** सही तापमान और आर्द्रता स्तरों को बनाए रखना हाइड्रोपोनिक चारा उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण होता है। इन कारकों को नियंत्रित करने के लिए जलवायु नियंत्रण प्रणालियों का उपयोग किया जा सकता है।
5. **कटाई :** हाइड्रोपोनिक चारा प्रणालियों में उगाई गई चारा फसलों को आमतौर पर उन्हें जब वे वांछित वृद्धि स्तर पर पहुंचते हैं, काट लिया जाता है, जो कि फसल और इसके उपयोग के आधार पर भिन्न हो सकता है।

हाइड्रोपोनिक चारा प्रणालियों के प्रकार:

किसान कम तकनीक से लेकर स्वचालित सेटअप तक चुन सकते हैं:

1. बेसिक ट्रे सिस्टम

सामग्री : प्लास्टिक ट्रे, अलमारियाँ, पानी स्प्रेयर।

प्रक्रिया : बीजों को ट्रे पर फैलाया जाता है, दिन में 2–3 बार हाथ से पानी दिया जाता है।

लागत : छोटे स्तर के सेटअप के लिए (Rs- 15000-20000/-)

2. स्वचालित रैक प्रणाली

विशेषताएं: ड्रिप सिंचाई, टाइमर और जलवायु नियंत्रण के साथ लंबवत रैक।

क्षमता : प्रतिदिन 100–500 किलोग्राम उत्पादन करता है।

लागत : Rs. 1,00000-15,00000, पैमाने पर निर्भर करता है।

हाइड्रोपोनिक चारा प्रणाली स्थापित करने के लिए चरण–दर–चरण मार्गदर्शिका

चरण 1 : जगह का चयन : एक छायादार, अच्छी तरह हवादार क्षेत्र चुनें (उदाहरण के लिए, ग्रीनहाउस, शेड, या बेसमेंट)। स्वच्छ पानी और बिजली की पहुंच सुनिश्चित करें।

चरण 2 : उपकरण की खरीददारी : ट्रे (जल निकासी के लिए छिद्रित), रैक, पानी पंप और पीवीसी पाइप। निगरानी के लिए हाइग्रोमीटर, थर्मामीटर और पीएच मीटर।

चरण 3 : बीज का चयन और तैयारी : अच्छी गुणवत्ता वाले बीजों का उपयोग किया जाना चाहिये। बीजो को नमक के पानी में या फिर 1% ब्लीच घोल में 10 मिनट तक भिगो करके, धो लेना चाइये ताकि फफूंद जनित बीमारियाँ न लगे। अंकुरण शुरू करने के लिए बीजों को 12–24 घंटों के लिए पानी में भिगोया जाता है।

चरण 4 : अंकुरण : अंकुरित बीजों को ट्रे में फैलाएं और 70-80% आर्द्रता के साथ 20–25 डिग्री सेल्सियस बनाए रखें। ट्रे की सतह से उपयुक्त जल निकास होना चाइये।

चरण 5 : सिंचाई : जड़ें और प्ररोह 2–3 दिनों के भीतर निकल आते हैं। इसके बाद जरूरत के हिसाब से बीजों पर दिन में 4–5 बार पानी छिड़कें, ताकि पर्याप्त नमी बनी रहे। जड़ों को गलने से बचाने के लिए पीएच 5.5–6.5 और ईसी <1.0 एमएस / सेमी सुनिश्चित करें।

चरण 6 : कटाई : अंकुरित पौध अप्रत्यक्ष प्रकाश में 7–10 दिन विकसित हो जाती हैं। अंकुरित पौध को ट्रे में न छेड़ें क्योंकि इससे चारे की वृद्धि प्रभावित होगी। जब जड़ें चटाई बना लें और अंकुरित पौध 6–8 इंच तक पहुंच जाएं तो चारा तैयार हो जाता है। पौध को जड़ सहित काटें। तुरंत खिलाएं या 24–48 घंटों के लिए ठंडी स्थिति में रखें

हाइड्रोपोनिक चारे के फायदे

1. **पशुधन के लिए :** हाइड्रोपोनिक हरा चारा पशुओं के बेहतर स्वास्थ्य में मददगार होता है। यह चारा किंवकों तथा प्रोबायोटिक्स युक्त होने की वजह से पशुओं की आंतों के स्वास्थ्य और प्रतिरक्षा को बढ़ावा देता है। शोध के अनुसार, इस चारे के खिलाने से, दुग्ध पशुओं के दूध उत्पादन में 15-20% की बड़ोतरी होती हैं। इस चारे की वजह से मवेशियों और मुर्गियों में प्रजनन क्षमता में वृद्धि पाई गई है।
2. **किसानों के लिए :** इस विधि को अपनाने से किसानों को महंगा हरे चारा तथा साइलेज पर निर्भरता कम हो जाती है। ऊर्ध्वाधर ट्रे की व्यवस्था का प्रयोग होने की वजह से कम जगह में ही चारा उत्पादन किया जाता है (उदाहरण के लिए, प्रतिदिन 1 टन के लिए 100 वर्ग फुट)। अतः इस विधि के द्वारा कम लागत, कम समय तथ कम जगह में अधिक हरा चारा पैदा किया जा सकता है।
3. **पर्यावरण के लिए :** खेतों में जहां प्रति किलोग्राम चारा उत्पादन में 50–100 लीटर जल की आवश्यकता होती है वही हाइड्रोपोनिक चारा उत्पादन में 2–3 लीटर पानी का उपयोग होता है। अतः पारंपरिक चारे की खेती की तुलना में 70-90% कम पानी का उपयोग होता है। इस विधि में उर्वरक अनुप्रयोगों के द्वारा होने वाला जल प्रदूषण नही होता हैं। चारा उत्पादन के प्रयोग में होने वाली मशीनरी से जुड़े कार्बन दी ऑक्साइड के उत्सर्जन में कटौती करता है।

***

शुष्क क्षेत्रीय फलों का प्रसंस्करण

कल्पना चौधरी, सोनाली चौधरी, महेंद्र चौधरी एवं ज्योती चौधरी
कृषि विज्ञान केन्द्र, अठियासन, नागौर, एसकेएन कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर (राजस्थान)
जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उत्तराखंड एवं महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान

शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में उत्पन्न होने वाले फल, जैसे बेर, खजूर, अंजीर, करौंदा, बेल आदि अपने समृद्ध पोषण गुणों के लिए जाने जाते हैं। हालांकि, इन फलों को ताजा रूप में भंडारण और विपणन चुनौतीपूर्ण हो सकता है, जिससे इनके शीघ्र खराब होने की संभावना रहती है। इन फलों के प्रसंस्करण से न केवल उनकी भंडारण अवधि बढ़ाई जा सकती है, बल्कि उनके स्वाद, पोषक तत्वों और औद्योगिक उपयोगिता को भी संरक्षित किया जा सकता है। आधुनिक प्रसंस्करण तकनीकों का उपयोग करके इन फलों से विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पाद, जैसे सूखे फल, जैम, जूस, पाउडर, अचार और स्क्वैश तैयार किए जा सकते हैं, जो किसानों और उद्यमियों के लिए एक लाभकारी व्यवसायिक अवसर प्रदान करते हैं।

शुष्क क्षेत्रीय फलों का महत्व

शुष्क क्षेत्रों में जल की सीमित उपलब्धता के कारण कृषि उत्पादन पर गहरा प्रभाव पड़ता है, जिससे फलों की पैदावार और गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है। हालांकि, इन प्रतिकूल परिस्थितियों में उगने वाले फल, जैसे बेर, खजूर, अंजीर, करौंदा, बेल आदि पोषण से भरपूर होते हैं और इनमें प्राकतिक रूप से जल की कमी सहने की क्षमता होती है। ये फल एंटीऑक्सीडेंट, खनिज तत्व और विटामिन का समृद्ध स्रोत होते हैं, जो मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी हैं। इनके नियमित सेवन से रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है, पाचन तंत्र स्वस्थ रहता है और शरीर को आवश्यक पोषक तत्व मिलते हैं। प्रसंस्करण द्वारा इन फलों की उपयोगिता और विपणन क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। उचित प्रसंस्करण तकनीकों से इनका भंडारण जीवन लंबा किया जा सकता है एंव विभिन्न उद्योगों, खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों और घरेलू उपयोग के लिए अधिक उपयुक्त बनाया जा सकता है। साथ ही, मूल्यवर्धन के माध्यम से किसानों और उद्यमियों को अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त करने का अवसर मिलता है, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी मजबूती मिलती है।

प्रमुख शुष्क क्षेत्रीय फलों का प्रसंस्करण

1. बेर (Ziziphus mauritiana)

बेर एक पौष्टिक फल है, जो शुष्क क्षेत्रों में व्यापक रूप से उगाया जाता है। इसे विभिन्न प्रसंस्करण विधियों द्वारा संरक्षित और मूल्यवर्धित किया जाता है, जिससे इसकी उपयोगिता और भंडारण क्षमता बढ़ जाती है।

सूखा हुआ बेरः ताजे बेर को उचित सफाई के बाद प्राकृतिक धूप में सुखाया जाता है, जिससे इसकी नमी कम हो जाती है और यह लंबे समय तक भंडारण योग्य हो जाता है। यह सूखा बेर पौष्टिक स्नैक के रूप में उपयोग किया जाता है और पारंपरिक औषधीय गुणों से भरपूर होता है।

बेर पाउडरः पूरी तरह से सूखे बेर को बारीक पीसकर पाउडर तैयार किया जाता है। इस पाउडर का उपयोग विभिन्न खाद्य उत्पादों, जैसे सूप, पेय पदार्थ, शर्बत और पारंपरिक आयुर्वेदिक दवाओं में किया जाता है, जिससे इसकी बहुउद्देश्यीय उपयोगिता बढ़ जाती है।

बेर कैंडी एवं जैम : बेर से कैंडी, जैम और चटनी तैयार की जाती हैं, जो स्वादिष्ट होने के साथ–साथ पोषण से भरपूर होती हैं। प्रसंस्करण के दौरान बेर को शुद्ध किया जाता है, और इसमें आवश्यक मात्रा में चीनी एवं प्राकृतिक संरक्षक मिलाकर टिकाऊ उत्पाद तैयार किए जाते हैं, जिनका उपयोग घरेलू एवं व्यावसायिक स्तर पर किया जा सकता है।

2. खजूर (Phoenix dactylifera) का प्रसंस्करण

खजूर एक अत्यधिक पोषक और ऊर्जावान फल है, जो शुष्क एवं अर्ध–शुष्क जलवायु में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इसे विभिन्न प्रसंस्करण विधियों द्वारा संरक्षित कर इसकी उपयोगिता और विपणन मूल्य को बढ़ाया जाता है।

सूखे खजूर (छुहारा) : खजूर को प्राकृतिक रूप से धूप में या औद्योगिक मशीनों द्वारा नियंत्रित तापमान में सुखाकर छुहारा बनाया जाता है। यह विधि खजूर की नमी को कम कर इसके भंडारण जीवन को बढ़ाने में सहायक होती है। छुहारे का उपयोग स्नैक, पारंपरिक मिठाइयों और औषधीय उत्पादों में किया जाता है।

खजूर पेस्ट और सिरप : खजूर से गाढ़ा मीठा पेस्ट और सिरप तैयार किया जाता है, जो मिठाइयों, बेवरेज, बेकरी उत्पादों और हेल्थ सप्लीमेंट्स में उपयोग किया जाता है। यह प्राकृतिक मिठास प्रदान करने के साथ–साथ पोषण से भी भरपूर होता है।

खजूर पाउडर : पूरी तरह से सूखे खजूर को पीसकर पाउडर बनाया जाता है, जिसे प्राकृतिक स्वीटनर के रूप में चीनी के विकल्प के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। यह कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स वाला होता है, जिससे यह स्वस्थ आहार का हिस्सा बन सकता है और इसे विभिन्न पेय, डेसर्ट और हेल्दी स्नैक्स में मिलाया जाता है।

3. अंजीर (Ficus carica) का प्रसंस्करण

अंजीर एक पोषक तत्वों से भरपूर फल है, जो शुष्क और अर्ध–शुष्क जलवायु में आसानी से विकसित होता है। इसके प्रसंस्करण से न केवल इसके भंडारण की अवधि बढ़ती है, बल्कि इसे विभिन्न रूपों में उपयोग कर इसकी विपणन क्षमता भी बढ़ाई जा सकती है।

सूखे अंजीर : अंजीर को प्राकृतिक रूप से धूप में सुखाया जाता है या फिर औद्योगिक मशीनों की मदद से नियंत्रित तापमान पर सुखाया जाता है। सुखाने की प्रक्रिया से इसकी नमी कम हो जाती है, जिससे यह लंबे समय तक खराब नहीं होता। सूखे अंजीर का उपयोग स्नैक्स, मिठाइयों और

औषधीय उत्पादों में किया जाता है, क्योंकि यह फाइबर, आयरन और एंटीऑक्सीडेंट का एक समृद्ध स्रोत होता है।

अंजीर जैम और जैली : ताजे अंजीर से स्वादिष्ट और पोषण से भरपूर जैम, जैली और स्क्वैश तैयार किए जाते हैं। इनका उपयोग ब्रेड, डेसर्ट और अन्य खाद्य उत्पादों के साथ किया जाता है। प्रसंस्करण के दौरान अंजीर के प्राकृतिक स्वाद और पौष्टिक तत्वों को बनाए रखते हुए इन्हें टिकाऊ बनाया जाता है।

अंजीर पाउडर : सूखे अंजीर को पीसकर अंजीर पाउडर तैयार किया जाता है, जो स्वास्थ्यवर्धक आहार के रूप में उपयोग किया जाता है। इसे स्मूदी, एनर्जी बार, बेवरेज और न्यूट्रिशनल सप्लीमेंट्स में मिलाया जाता है, जिससे इसका उपयोग अधिक सुविधाजनक और स्वास्थ्यप्रद बन जाता है।

4. करौंदा (Carissa carandas) का प्रसंस्करण

करौंदा एक पौष्टिक और औषधीय गुणों से भरपूर फल है, जिसे इसके अद्वितीय स्वाद और उपयोगिता के कारण विभिन्न खाद्य उत्पादों में प्रसंस्करण कर मूल्य संवर्धित किया जाता है। इसका उपयोग स्वादिष्ट जैम, जैली, अचार और चटनी बनाने में किया जाता है, जिससे इसकी भंडारण क्षमता और विपणन मूल्य बढ़ जाता है।

करौंदा जैम एवं जैली : करौंदे से बनने वाला जैम और जैली स्वाद में खट्टा–मीठा होता है, जो बच्चों और बड़ों दोनों को पसंद आता है। जैम और जैली बनाने की प्रक्रिया में करौंदे के रस को निकालकर उसे चीनी और प्राकृतिक पेक्टिन के साथ पकाया जाता है, जिससे इसका सहेजने का समय बढ़ता है और इसे लंबे समय तक उपयोग किया जा सकता है।

अचार एवं चटनी : करौंदे का अचार और चटनी अपने विशिष्ट तीखे और खट्टे स्वाद के कारण भारतीय रसोई में बेहद लोकप्रिय हैं। इसे विभिन्न मसालों और तेल के साथ मिलाकर तैयार किया जाता है, जिससे इसका स्वाद लंबे समय तक बरकरार रहता है। करौंदे में मौजूद प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट और विटामिन इसे एक स्वास्थ्यवर्धक खाद्य उत्पाद बनाते हैं।

5. बेल (Aegle marmelos) का प्रसंस्करण

बेल एक पारंपरिक और औषधीय गुणों से भरपूर फल है, जिसे विभिन्न रूपों में प्रसंस्करण कर उपयोग किया जाता है। इसके प्राकृतिक गुण न केवल स्वास्थ्य के लिए लाभकारी हैं, बल्कि इसे विभिन्न खाद्य और औषधीय उत्पादों में भी परिवर्तित किया जाता है।

बेल शर्बत: बेल का गूदा पोषक तत्वों से भरपूर होता है, जिससे एक स्वादिष्ट और ताजगी प्रदान करने वाला शर्बत तैयार किया जाता है। गर्मी के मौसम में यह शर्बत शरीर को ठंडक प्रदान करता है और पाचन को सुधारने में सहायक होता है। इसे प्राकृतिक मिठास और सुगंध के कारण घरेलू और वाणिज्यिक दोनों स्तरों पर तैयार किया जाता है।

बेल पाउडर : बेल के गूदे को सुखाकर और पीसकर इसका पाउडर तैयार किया जाता है, जो अपने औषधीय गुणों के कारण अत्यधिक मूल्यवान होता है। यह पाचन स्वास्थ्य को सुधारने, शरीर को डिटॉक्स करने और पेट संबंधी विकारों को कम करने में मदद करता है। बेल पाउडर का उपयोग आयुर्वेदिक दवाओं और हर्बल उत्पादों में व्यापक रूप से किया जाता है।

प्रसंस्करण के लाभ

फलों के प्रसंस्करण से उनकी गुणवत्ता, उपयोगिता और बाजार मूल्य में वृद्धि होती है। यह न केवल किसानों और उद्योगों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाता है, बल्कि उपभोक्ताओं को अधिक पौष्टिक और स्वास्थ्यवर्धक उत्पाद भी प्रदान करता है।

भंडारण क्षमता में वृद्धि : ताजे फलों की भंडारण अवधि सीमित होती है, लेकिन प्रसंस्करण के माध्यम से उनकी संग्रहण क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। सुखाने, पाउडर और जैम–जेली जैसे उत्पादों के रूप में इन्हें लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

मूल्य संवर्धन से किसानों को अधिक लाभ : फलों को केवल कच्चे रूप में बेचने की तुलना में प्रसंस्कृत उत्पादों (जैसे सूखे फल, पाउडर, शर्बत, सिरप) के रूप में बेचना अधिक लाभदायक होता है। इससे किसानों की आय में वृद्धि होती है और वे अपने उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

निर्यात की संभावनाएँ बढ़ती हैं : प्रसंस्कृत फलों की लंबी शेल्फ लाइफ और बढ़ी हुई गुणवत्ता के कारण इन्हें अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी निर्यात किया जा सकता है। इससे स्थानीय किसानों और उद्योगों को वैश्विक स्तर पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराने का अवसर मिलता है।

स्वास्थ्यवर्धक उत्पाद उपलब्ध होते हैं: प्रसंस्करण से फलों को इस प्रकार तैयार किया जाता है कि उनके पोषक तत्व संरक्षित रहें और वे उपभोक्ताओं के लिए स्वास्थ्यवर्धक और आसानी से उपयोग योग्य बन सकें। जैसे, सूखे फल, बेल पाउडर, खजूर सिरप आदि प्रा तिक और पोषक तत्वों से भरपूर विकल्प प्रदान करते हैं।

शुष्क क्षेत्रों में फलों का प्रसंस्करण न केवल किसानों और उद्यमियों के लिए लाभकारी सिद्ध होता है, बल्कि उपभोक्ताओं को भी पौष्टिक, सुरक्षित और दीर्घकालिक रूप से संरक्षित खाद्य उत्पाद प्रदान करता है। इन क्षेत्रों में फलों की सीमित उपलब्धता और अल्प भंडारण अवधि को देखते हुए आधुनिक प्रसंस्करण तकनीकों का महत्व और अधिक बढ़ जाता है। उपयुक्त प्रसंस्करण विधियों को अपनाकर न केवल फलों की गुणवत्ता और पोषण स्तर को बनाए रखा जा सकता है, बल्कि उनके उपयोग को भी दीर्घकालिक और व्यावसायिक रूप से लाभकारी बनाया जा सकता है। यह प्रक्रिया खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के साथ–साथ ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी सुदृढ़ करती है, जिससे किसानों की आय में वृद्धि होती है और कृषि–आधारित उद्योगों को नया आयाम मिलता है।

***

सब्जियों का मूल्य संवर्धन (वैल्यू एडिशन) : तकनीक, प्रतिबंध और समाधान

मामराज गुर्जर एवं सुनील कुमार मीना
एस. के. एन. कृषि महाविद्यालय जोबनेर, जयपुर

वैश्विक स्तर पर सब्जियों के उत्पादन और विविध सब्जी–उत्पाद के कारोबार में व्यापक वृद्धि हुई है। बढ़ती आय. घटते परिवहन लागत, नई उन्नत प्रसंस्करण तकनीक और वैश्वीकरण ने इस विकास के लिए प्रेरित किया है। लेकिन यह वृद्धि, आपूर्ति श्रृंखला प्रबन्धन और प्रसंस्करण के धीमी विकास से मेल नहीं करता है। इस क्षय को कम करने, विस्तार और विविधकरण के लिए प्रोसेसिंग सबसे प्रभावी उपाय हैं। प्रसंस्करण गतिविधियां, ताजा उपज के लिए बाजार के अवसरों में वृद्धि करते हुए मूल्य वृद्धि करते हैं तथा पश्च कटाई हानियों को कम करते हैं। प्रसंस्करण, खेती की आय में वृद्धि, ग्रामीण रोजगार सृजन और विदेशी मुद्रा उत्पन्न करके कृषि उत्पादन प्रणालियों की व्यवहार्यता, लाभप्रदता और स्थिरता में सुधार लाता है। भारत विश्व में सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। (209 .39 मिलियन टन : विश्व उत्पादन का 14 प्रतिशत) (एनएचबी 2023–24)। परन्तु फलों और सब्जियों का प्रसंस्करण विकसित देशों की तुलना में बहुत कम है जबकि मूल्य संवर्धन 7 प्रतिशत है (चीन में 20 प्रतिशत और यूनाइटेड किंगडम में 88 प्रतिशत) । प्रसंस्करण (मूल्य संवर्धन सहित) में जीडीपी, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन और उद्यमियों के लिए व्यवसाय के अवसरों में योगदान करने की जबरदस्त क्षमता है। भविष्य में 35 प्रतिशत मूल्य वृद्धि और 10 प्रतिशत प्रोसेसिंग के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए विभिन्न चरणों में आने वाली बाधाओं को ध्यान देने की आवश्यकता है। मूल्य संवर्धन का मतलब है किसी उत्पाद या सेवा के ग्राहक मूल्य में वृद्धि होना। यह ग्राहक की जरूरतों और धारणाओं द्वारा संचालित एक उत्पादन / विपणन रणनीति है। मूल्य संवर्धित कृषि के उदाहरण हैं खाद्य प्रसंस्करण, सुखाने, डिब्बा बन्दी, रस निकालना, अनूठी पैकेजिंग, लेबलिंग और मार्केटिंग। मूल्य संवर्धन उपभोक्ता के लिए अधिक पोषक उत्पाद है जबकि उत्पादक के लिए प्रसंस्करण और उत्पाद के वितरण में भागीदारी है यह ऊध्वाधर एकीकरण के रूप में जान जाता है। मूल्यवर्धित विपणन कई पारंपरिक उत्पादकों के लिए एक अपेक्षाकृत नई अवधारणा है जिसमें पूंजी, सामूहिक कार्य और खाद्य उद्योग के विभिन्न क्षेत्रों का एकीकरण है।

मूल्य संवर्धन का महत्व

संघीय कृषि नीतियां बदलते उपभोक्ता विकल्प और कृषि वस्तुओं के वैश्वीकरण ने वैकल्पिक उत्पादन / विपणन रणनीतियों को आवश्यक बनाया है। आज के खाद्य उपभोक्ता बेहतर स्वाद, अधिक पोषक, ज्यादा विविध और सुविधाजनक उत्पाद की मांग करते हैं। मूल्य वर्धित कृषि में शामिल होने से किसानों को शुद्ध कृषि लाभ में बढ़ोतरी होगी जबकि खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में बिचौलियों की भागीदारी कम हो जायेगी।

पारम्परिक सब्जी प्रसंस्करण तकनीकियाँ

पारम्परिक प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियों में उच्च स्तरीय, मध्यवर्ती और कारीगरी तकनीक शामिल है। परम्परागत प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियों जैसे कि शीत उपचार, सुखाने, थर्मल प्रसंस्करण (बॉटलिंग और डिब्बा बन्दी), निर्जलीकरण (नमक, ब्रिनिंग और कैंडिंग) और किण्डवन को व्यापक रूप से कॉटेज, छोटे, मध्यम और बड़े उद्यमों द्वारा कृत्रिम, मध्यवर्ती और उच्च स्तर पर सब्जियों के प्रसंस्करण में प्रयोग किया जाता है। ज्यूस, किण्वित वाइन, शराब, कँडीज, जमे हुए और सूखे जैसे प्रसंस्कृत उत्पाद इन प्रौद्योगिकियों का उपयोग करते हुए तैयार किये जाते की है। जन वेश्व यन रन्तु में हालांकि ये प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियों सब्जियों को सूक्ष्म जीवविद् स्थिर बनाने में आम तौर पर प्रभावी हैं लेकिन वे उत्पाद के स्वाद, रंग और बनावट विशेषताओं को बदलते हैं।

हिमीकरण/फ्रीजिंग

यह तकनीक (ठीक से किये जाने पर) उत्पाद/खाद्य वर्धन पदार्थों के आकार, बनावट, स्वाद और रंग में न्यूनतम परिवर्तन करता है। माइनस 18 डिग्री सेल्सियस के तापमान पर संग्रहित सब्जियों में 12 महीनों तक अच्छी गुणवत्ता बनाए रखती हैं। उच्च ऊर्जा आवश्यकता (ठंड के संचालन के लिए) इस प्रकार की तकनीक की लागत एवं उत्पादों के मूल्य बढ़ाते हैं।

थर्मल प्रोसंसिंग

थर्मल प्रसस्करण का जैम, जेली, डिब्बा बंद और बोतलबंद सब्जियों के उत्पादन में व्यापक रूप से प्रयोग होता है। इस तकनीक में असेपटेक

प्रोसेसिंग सिस्टम (विसंक्रमित परतदार पैकेजिंग) का उपयोग किया जाता है जो उत्पाद की कीमत बढ़ाते हैं।

सुखाने की प्रौद्योगिकी

इस प्रौद्योगिकी में सौर सुखावक से लेकर नवीन प्रौद्योगिकी जैसे फ्रीज सुखावक, ड्रम सुखावक और स्प्रे सुखावक का उपयोग किया जाता है। सूखे उत्पादों में कम वजन परिवहन लागत का लाभ होता है। हालांकि ये तकनीक पौष्टिक मूल्य, रंग, स्वाद, सुगंध और बनावट में नुकसान करते हैं।

निर्जलीकरण उपचार

सब्जियों के सल्टिंग और ब्राइनिंग निर्जलीकरण के उपचार हैं जो ओसमेसिस के सिद्धांत पर आंधारित है। इन प्रक्रियाओं में सब्जियों को बढ़ते ओसमाटिक दबाव के एक जलीय घोल (उच्च चीनी या नमक) में डाला जाता है। निर्जलीकरण उपचार सब्जियों के उत्तकों से एक सीमित ताप पर पानी को हटा देता है। इस तकनीक से उत्पाद की कीमत को कम करने के लिए सुखाने और हिमीकरण के साथ संयोजन में लागू किया जा सकता है।

किण्वन/फेरमेंटेशन

किण्वन खाद्य पदार्थो की धीमी जैव–संरक्षक प्रक्रिया है, जो सूक्ष्मजीवों या एंजाइम (सूक्ष्मजीव, पौधे या पशु मूल के) द्वारा उत्प्रेरित है। यह खाद्य संरक्षण / प्रसंस्करण का सबसे पुराना रूप है। उपयुक्त पोस्ट–किण्वन उपचारों की अनुपलब्धता के कारण कई किण्विन उत्पाद सीमित जीवन के होते हैं।

सब्जियों के आधुनिक प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी

सुविधाजनक और उच्च गुणवत्ता वाले, सुरक्षित, ताजा समान गुण वाले खाद्य पदार्थों के बढ़ते उपभोक्ता मांग के फलस्वरूप सब्जी प्रसंस्कीण में काफी नवीनता और विविधीकरण अविष्कार हुये हैं। नए उत्पाद जैसे छंटनी और पैक किये गए सेम, तैयार सलाद और पूर्व तैयार फ्राई मिक्स सुपर मार्केट और निर्यात व्यापार में तेजी से प्रवेश कर रहे है। यद्यपि इस प्रकार के मूल्य–वृद्धि में अपेक्षाकृत कम उत्पाद परिवर्तन की आवश्यकता होती है। परन्तु उत्पाद की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए उपकरण व प्रबंधन प्रणालियों में निवेश और खाद्य सुरक्षा सिद्धांतों और प्रथाओं के कड़े पालन अनिवार्य हैं।

न्यूनतम प्रसंस्करण / मिनिमल प्रोसेसिंग

इस तकनीक से सब्जियों की हैडलिंग, प्रोसेसिंग, पैकेजिंग और वितरण अच्छा प्रबंधन प्रथाओं (जीएमपी) और हैजर्ड विश्लेषण और क्रिटिकल कंट्रोल पॉइंट (एचएसीसीपी) के उचित खाद्य सुरक्षा सिद्धांतों के पालन के साथ किया जाता है। न्यूनतम प्रसंस्करण कार्य जैसे काटना, टुकड़े करना, छीलने इत्यादि से पौधे के ऊतकों को चोट पहुँचते हैं जिस कारण एंजाइमिक बदलाव शुरू होता है। वैरएिटल, शारीरिक–परिपक्वता और पूर्व–फसल घटक परिवर्तनों को और प्रभावित करते हैं। न्यूनतम प्रसंस्कृत उत्पादों की सूक्ष्मजीव स्थिरता और संवेदी गुणवत्ता बढ़ाने के लिए एक बाधा दृष्टिकोण लागू किया गया है। इस दृष्टिकोण का बुनियादी सिद्धांत परिरक्षक कारकों द्वारा सूक्ष्मजीव के गतिविधि का निषेध करना है। कम ताप पर भण्डारण, हल्का गरम उपचार, पानी की गतिविधि पर नियंत्रण, उपयुक्त पैकेजिंग के जरिये रेडॉक्स क्षमता का नियंत्रण, सोर्बेट, बैंजोएट और एस्कॉर्बिक एसिड जैसे परिरक्षकों का उपयोग आमतौर पर न्यूनतम प्रसंस्करण में बाधाओं के तौर पर किया जाता है। प्रसंस्करण, पैकेजिंग, वितरण और खुदरा बिक्री के दौरान उपयुक्त गुणवत्ता का पानी और कोल्ड स्टोरेज न्यूनतम प्रसंस्करण की महत्वपूर्ण आवश्यकताएं हैं। न्यनूतम प्रोसेसिंग जिसमें बाधा अवधारणा का अनुप्रयोग किया जाता है एक सस्ती, ऊर्जा कुशल, सरल और संतोषजनक सब्जियों का मूल्य संवर्धन तकनीकी है।

गैर थर्मल प्रोससिंग प्रौद्योगिकी

गैर–थर्मल भौतिक प्रक्रियाएं जैसे उच्च तीव्रता स्पदनयुक्त बिजली के क्षेत्र, उच्च तीव्रता स्पंदित प्रकाश, उच्च जल द्रव्य दबाव और भोजन विकिरण, न्यूनतम प्रोसेसिंग आदि भविष्य में उपयोग लिए जाने वाली संभावित तकनीकी हैं।

प्रसंस्करण ऑपरेटर द्वारा सामना किए जाने वाले मुद्दे और बाधाएं

बढ़ते शहरीकरण और वैश्वीकरण ने संसाधित सब्जी उत्पादों के भण्डारण, गुणवत्ता, सुविधा और सुरक्षा विशेषताओं की मांग बढ़ाई है। इन मानदंडों के अनुरूप पूरा कार्य करना सब्जी प्रसंस्करण में लगे छोटे और मध्यम उद्यमों (एसएमई) के लिए एक बड़ी चुनौती है। इनमें से कई उद्यम, तकनीकी, ढांचागत और संस्थागत कारकों के कारण जीएमपी, एचएसीसीपी प्रमाणीकरण, गुणवत्ता आश्वासन, लेबलिंग, पैकेजिंग और पर्यावरण मानकों के अन्तर्राष्ट्रीय मानकों का पालन करने में असमर्थ हैं।

निष्कर्ष

आधुनिक और पारंपरिक प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी के उपयोग से सब्जी क्षेत्र के भीतर वर्टिकल / खड़ी विविधीकरण के नए अवसर बनाए जा सकते है। इन अवसरों का लाभ लेने के लिए आवश्यक होगा कि उत्पादन क्षेत्र के साथ एक मजबूत सम्बन्ध विकसित किया जाए और उन रणनीतिक गठजोड़ों को बनाया और बढ़ाया जाए जिससे तकनीक और कौशल विकास उन्नत हो। साथ ही सरकार की नीतियों के समर्थन से उत्पाद प्रतिस्पर्धात्मक का बढ़ावा हो।

***

कार्बन खेती : जलवायु परिवर्तन के समाधान में एक अभिनव कदम

शालिनी मीणा, उदिती धाकड़, आर. के. मीणा एवं वर्षा गुप्ता
शस्य विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, कोटा

कृषि भारत की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है, जो लगभग 58% आबादी का भरण–पोषण करती है और 1 .4 बिलियन से अधिक लोगों के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करते हुए सकल घरेलू उत्पाद में 17-18% का योगदान देती है। अपने आर्थिक महत्व से परे, यह ग्रामीण विकास को बढ़ावा देती है, सांस्कृतिक विरासत को बनाए रखती है, और डेयरी, मत्स्य पालन और वानिकी जैसे संबद्ध क्षेत्रों में रोजगार पैदा करती है। कृषि एक जलवायु–संवेदनशील क्षेत्र है, इसलिए पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करने के लिए संधारणीय प्रथाओं को अपनाना आवश्यक है। कार्बन खेती, एक संधारणीय दृष्टिकोण है जिसमे मिट्टी, पौधों और पेड़ों द्वारा वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड को कैप्चर तथा संग्रहीत करके जलवायु चैंज में कृषि की भूमिका को बढ़ाता है। संरक्षण जुताई, फसल चक्रण, कवर क्रॉपिंग, जैविक खेती और कृषि वानिकी जैसी प्रथाएँ मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करती हैं, जैव विविधता को बढ़ावा देती हैं, और कार्बन को मृदा में संग्रहित करते हुए उत्पादकता बढ़ाती हैं। जलवायु शमन और कृषि संधारणीयता को एकीकृत करके, कार्बन खेती एक हरित, लचीले भविष्य का मार्ग प्रदान करती है, जो पर्यावरणीय और आर्थिक दोनों लाभ सुनिश्चित करती है।

कार्बन खेती क्या है?

"कार्बन खेती" जलवायु शमन में योगदान करने के लिए डिज़ाइन की गई कृषि प्रबंधन प्रथाओं को संदर्भित करती है। यह संधारणीय कृषि प्रथाओं को संदर्भित करता है जिसका उद्देश्य ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करते हुए पेड़ों और मिट्टी में कार्बन के भंडारण को बढ़ाना है। इसमें कार्बन उत्सर्जन के नियंत्रण के साथ–साथ भूमि, पशुधन, मिट्टी और वनस्पति सहित विभिन्न पहलुओं में कार्बन का व्यापक प्रबंधन शामिल है। उदाहरणों में कृषि वानिकी, अंतर–फसल, कवर फसलों की खेती, कम जुताई या खाद, खाद या गीली घास जैसे जैविक उर्वरकों का अनुप्रयोग और बेहतर प्रबंधन शामिल हैं।

इसमें तीन प्रमुख घटक शामिल हैं:

1. कार्बन हटाना : इसमें मिट्टी और बायोमास में कार्बन को अलग करना और स्थायी रूप से संग्रहीत करना शामिल है।

2. उत्सर्जन से बचाव : ये प्रथाएँ पहले से संग्रहीत कार्बन के नुकसान को रोकती हैं, जिससे कृषि प्रणाली के भीतर इसका प्रतिधारण सुनिश्चित होता है।

3. उत्सर्जन में कमी : इसका मतलब है कि खेती की गतिविधियों से होने वाले उत्सर्जन के मौजूदा स्तर से नीचे ग्रीनहाउस गैस (जीएचजी) उत्सर्जन को कम करना।

भारत में कार्बन खेती का महत्व

1. जलवायु परिवर्तन शमन

भारत वैश्विक स्तर पर ग्रीनहाउस गैसों का तीसरा सबसे बड़ा उत्सर्जक है, जो हाल के अनुमानों के अनुसार वैश्विक उत्सर्जन में लगभग 7] का योगदान देता है, जो वैश्विक जलवायु शमन प्रयासों में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका को दर्शाता है। लगभग 1 5 0 मिलियन हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि के साथ, कार्बन खेती के तरीकों को अपनाने से वायुमंडलीय कार्बन की महत्वपूर्ण मात्रा को अलग किया जा सकता है, उदाहरण के लिए, आंध्र प्रदेश में कृषि वानिकी प्रणालियों के उपयोग ने कृषि उत्पादकता में सुधार करते हुए कार्बन भंडारण में मापनीय वृद्धि का प्रदर्शन किया है।

2. मृदा स्वास्थ्य बहाली

रासायनिक उर्वरकों, मोनोक्रॉपिंग और वनों की कटाई पर अत्यधिक निर्भरता के कारण भारतीय मिट्टी गंभीर रूप से खराब हो गई है। कार्बन खेती के तरीके कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में सुधार, जल प्रतिधारण को बढ़ाने और कटाव को कम करके मिट्टी की उर्वरता को फिर से जीवंत कर सकते हैं। मध्य प्रदेश में, जिन किसानों ने खाद और कवर फसलों को अपनाया है, उन्होंने मिट्टी की उर्वरता और बेहतर जल प्रतिधारण में वृद्धि की सूचना दी है, जिससे पैदावार में वृद्धि हुई है।

3. कृषि उत्पादकता और जल संसाधन प्रबंधन

कार्बन खेती प्रथाओं के परिणामस्वरूप मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार से फसल की पैदावार बेहतर होती है और रासायनिक इनपुट पर निर्भरता कम होती है, जिससे बढ़ती आबादी के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित होती है। तमिलनाडु में, फसल चक्र के साथ शून्य–जुताई का अभ्यास करने वाले किसानों ने उत्पादकता में वृद्धि और कम उत्पादन लागत हासिल की है। कार्बन खेती में उपयोग की जाने वाली प्रैक्टिसेस मृदा की सरंचना में सुधार करती है, जिससे उसकी जल धारण क्षमता बढ़ती है, सिंचाई की जरूरतों को कम करती है और सूखे के प्रति लचीलापन बढ़ाती है। राजस्थान में, बायोचार और जैविक मल्च के उपयोग ने कई किसानों को जल संरक्षण और शुष्क क्षेत्रों में उत्पादकता बनाए रखने में मदद की है।

शस्यविज्ञान से संबंधित कार्बन खेती के तरीके

1 कृषि वानिकी

कृषि वानिकी पेड़ों को फसलों के साथ एकीकृत करती है, जो कृषि उत्पादकता को बनाए रखने या बढ़ाने के साथ–साथ कार्बन को संग्रहित करने में योगदान देती है। भारत में, कृषि वानिकी योजना गेहूं, दालों या मूंगफली जैसी फसलों के साथ मोरिंगा या बबूल जैसे पेड़ लगाने को बढ़ावा देती है। ये पेड़ कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं, मिट्टी के स्वास्थ्य को बेहतर बनाते हैं, कटाव को कम करते हैं और लकड़ी या गैर–लकड़ी वन उत्पादों से अतिरिक्त आय स्रोत प्रदान करते हैं। यह अभ्यास मिट्टी की उर्वरता में सुधार करता है, जल चक्रों को विनियमित करने में मदद करता है, और जैव विविधता के अनुकूल वातावरण बनाता है।

2 संरक्षण जुताई और कम जुताई

संरक्षित जुताई के तरीके मिट्टी में कार्बन भंडारण को प्रभावित करते हैं। पारंपरिक जुताई से मिट्टी का कार्बन वायुमंडल में निकल सकता है। संरक्षण जुताई में मिट्टी को कम से कम डिस्टर्ब किया जाता है, जो मृदा में कार्बन बनाए रखने में मदद करता है और मृदा उर्वरता में सुधार को बनाये रखता है। पंजाब और हरियाणा में, चावल की कटाई के बाद गेहूं की खेती में जीरो–टिलेज (या न्यूनतम जुताई) की प्रथा को व्यापक रूप से अपनाया

गया है। यह विधि जुताई के लिए ईंधन की खपत को भी कम करती है। यह ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करता है, मिट्टी की नमी को बनाए रखता है और समग्र मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करता है।

3 कवर क्रॉपिंग

कवर क्रॉप मुख्य रूप से मिट्टी के कटाव को रोकने, मिट्टी के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने और कार्बनिक पदार्थ को बढ़ाने के लिए उगाए जाने वाले पौधे हैं, जो मिट्टी की कार्बन को संग्रहीत करने की क्षमता को बढ़ाते हैं। मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश जैसे क्षेत्रों में, किसान ऑफ–सीजन के दौरान कवर फसलों के रूप में हरी चना (मूंग), काला चना (उड़द), या सोयाबीन जैसी फसल लगाते हैं। ये फसलें मिट्टी में नाइट्रोजन को स्थिर करती हैं, मिट्टी की संरचना में सुधार करती हैं और कार्बनिक पदार्थ जोड़ती हैं, जिससे कार्बन को सोखने में मदद मिलती है। और दालों की बिक्री के माध्यम से आय का स्रोत मिलता है।

4. जैविक खेती

जैविक खेती में कृत्रिम उर्वरकों और कीटनाशकों का इस्तेमाल नहीं होता है, बल्कि मिट्टी की उर्वरता को बेहतर बनाने के लिए प्राकृतिक प्रक्रियाओं पर निर्भर रहना पड़ता है। इससे मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ अधिक होते हैं, जो कार्बन को सोख लेते हैं। मिट्टी की सेहत को बेहतर बनाने के लिए कम्पोस्ट, खाद और जैव उर्वरक जैसे जैविक उर्वरकों का इस्तेमाल किया जाता है, और पारंपरिक तरीकों की तुलना में मिट्टी द्वारा सोखा जाने वाला कार्बन अधिक होता है। यह सिंथेटिक उर्वरकों से बचकर कार्बन फुटप्रिंट को कम करता है, जैव विविधता में सुधार करता है और मिट्टी की कार्बन को स्टोर करने की क्षमता को बढ़ाता है।

5. पशुधन प्रबंधन और खाद प्रबंधन

पशुधन और पशु अपशिष्ठ का उचित प्रबंधन मीथेन उत्सर्जन को कम करने और मिट्टी में कार्बन भंडारण को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गुजरात और राजस्थान जैसे डेयरी फार्मिंग क्षेत्रों में, किसान गाय के गोबर से मीथेन को इकट्ठा करने और उसे बायोगैस में बदलने के लिए बायोगैस प्लांट का इस्तेमाल करते हैं। इसके अलावा, पशुधन खाद को कम्पोस्ट करके और उसे जैविक खाद के रूप में इस्तेमाल करने से मिट्टी में अधिक कार्बन को बनाए रखने में मदद मिलती है।

6. जल प्रबंधन (ड्रिप सिंचाई और वर्षा जल संचयन)

ड्रिप सिंचाई और वर्षा जल संचयन जैसी कुशल जल प्रबंधन पद्धतियाँ, पानी की बर्बादी को कम करती हैं और पानी की उपलब्धता को बढ़ाती हैं, जो मिट्टी की नमी को बनाए रखने और पौधों की वृद्धि का समर्थन करके अप्रत्यक्ष रूप से कार्बन पृथक्करण को लाभ पहुँचा सकती हैं। राजस्थान, गुजरात और तमिलनाडु जैसे क्षेत्रों में, किसानों ने अनार, टमाटर और मिर्च जैसी फसलों के लिए ड्रिप सिंचाई प्रणाली को अपनाया है। फसलों पर पानी के तनाव को कम करता है, मिट्टी में कार्बन भंडारण को बढ़ाता है, और पानी की प्रति इकाई फसल की उपज को बढ़ाता है।

7. फसल चक्र और विविधीकरण

फसल चक्र और विविधीकरण मिट्टी के स्वास्थ्य और उर्वरता को बनाए रखने में मदद करते हैं। विविध फसल प्रणालियाँ में लेग्यूमिनेसी कुल की फसलों को शामिल करने से मिट्टी का कटाव कम होता है और मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ को बढ़ाने के साथ–साथ फसले पर्यावरणीय नाइट्रोजन का मृदा में स्थिरीकरण भी करती हैं। पंजाब और हरियाणा में प्रचलित चावल–गेहूँ चक्र प्रणाली में, किसान धान के बाद गेहूँ उगाते हैं, लेकिन मिट्टी की सेहत और कार्बन अवशोषण को बेहतर बनाने के लिए, कुछ किसान अब फसल चक्र के हिस्से के रूप में सरसों, मसूर या फलियाँ वाली फसले उगाना शुरू कर रहे हैं। इससे सिंथेटिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है, मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ बढ़ता है और मिट्टी में ज़्यादा कार्बन अवशोषण में मदद मिलती है।

8. बायोचार उत्पादन और अनुप्रयोग

बायोचार कार्बन का एक स्थिर रूप है जो ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में कार्बनिक पदार्थ को गर्म करके बनाया जाता है। मिट्टी में डालने पर, यह मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाता है और कार्बन अवशोषण को बढ़ाता है। कर्नाटक और तमिलनाडु के कुछ हिस्सों में, किसान फसल अवशेषों (जैसे चावल के भूसे या नारियल की भूसी) से उत्पादित बायोचार का उपयोग मिट्टी के सुधार के रूप में करते हैं। यह मिट्टी की संरचना में सुधार करता है, नमी बनाए रखता है और सूक्ष्मजीवी गतिविधि को बढ़ाता है।

9. टिकाऊ चावल की खेती

चावल की खेती के दौरान काफी मात्रा में मीथेन का उत्सर्जन होता है। वैकल्पिक गीलापन और सुखाने (अल्टरनेट वेटिंग एंड ड्रॉइंग) जैसी प्रथाएँ मीथेन उत्सर्जन को कम करने और कार्बन अवशोषण को बढ़ावा देने में मदद करती हैं। तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल में अपनाई जाने वाली SRI (चावल गहनता प्रणाली) पद्धति में, किसान अपने चावल के खेतों को लगातार पानी में डूबाए रखने के बजाय उन्हें बारी–बारी से गीला और सुखाते हैं। इस प्रक्रिया में पानी की भी बचत होती है।

10. सिंथेटिक उर्वरकों के उपयोग को कम करना

सिंथेटिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से नाइट्रस ऑक्साइड निकलता है, जो एक शक्तिशाली ग्रीनहाउस गैस है। इनके उपयोग को कम करके और गोबर की खाद, जैव उर्वरक और हरी खाद जैसे अधिक टिकाऊ विकल्पों पर स्विच करके कार्बन उत्सर्जन को कम किया जा सकता है। महाराष्ट्र में जैविक कपास की खेती में, किसानों ने रासायनिक उर्वरकों की जगह जैव उर्वरक और वर्मीकम्पोस्ट को अपनाया है। यह अभ्यास कपास की खेती के कार्बन पदचिह्न को कम करता है और मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करता है।

भारत में कार्बन खेती को लागू करने में चुनौतियाँ

1. **1.08 हेक्टेयर** के औसत भूमि आकार वाले छोटे जोत वाले किसानों के लिए उन्नत कार्बन खेती के तरीकों को अपनाना आर्थिक रूप से चुनौतीपूर्ण हो सकता है।
2. **ज्ञान और जागरूकता का अभाव :** कई किसानों में कार्बन खेती के लाभों और तकनीकी ज्ञान तक पहुँच के बारे में जागरूकता की कमी है।
3. **जलवायु परिवर्तनशीलता :** अनियमित वर्षा और बढ़ता तापमान कुछ कार्बन खेती के तरीकों के कार्यान्वयन में बाधा डाल सकता है।
4. **प्रारंभिक निवेश लागत :** कृषि वानिकी और बायोचार उत्पादन जैसी प्रथाओं के लिए अग्रिम निवेश की आवश्यकता होती है, जो संसाधन – विहीन किसानों को रोक सकता है।

निष्कर्ष

कार्बन खेती में भारतीय कृषि को एक टिकाऊ और जलवायु–लचीली प्रणाली में बदलने की क्षमता है। मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाने, ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और आर्थिक अवसर प्रदान करने के माध्यम से, कार्बन खेती भारत के खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय स्थिरता प्राप्त करने के लक्ष्यों के साथ संरेखित होती है। हालाँकि, इन प्रथाओं को बढ़ाने के लिए नीति निर्माताओं, शोधकर्ताओं और कृषक समुदायों के ठोस प्रयासों की आवश्यकता होती है। उचित समर्थन और निवेश के साथ, भारत कार्बन अवशोषण और जलवायु परिवर्तन न्यूनीकरण के लिए कृषि विज्ञान का लाभ उठाने में अग्रणी भूमिका निभा सकता है।

***

दक्षिणी-पूर्वी राजस्थान में कृषि-पर्यटन की संभावनाएं

प्रताप सिंह, भँवर लाल ढाका, योगेंद्र कुमार मीना एवं अभय कुमार व्यास
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

ग्रामीण भारत की तस्वीर आज भी खेतों, हरे–भरे मैदानों, और सरल जीवनशैली से जुड़ी हुई है। लेकिन समय के साथ, ग्रामीण अर्थव्यवस्था और समाज में बदलाव की जरूरत महसूस की जा रही है। ऐसे में, कृषि–पर्यटन यानी एग्रो–टूरिज्म एक ऐसा माध्यम बनकर उभर रहा है, जो न केवल ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत कर रहा है, बल्कि ग्रामीण जीवन को एक नई दिशा भी दे रहा है। कृषि–पर्यटन एक ऐसी अवधारणा है, जिसमें शहरी और ग्रामीण पर्यटकों को कृषि और ग्रामीण जीवन के अनुभवों से जोड़ा जाता है। इसमें पर्यटकों को खेतों में काम करने, पारंपरिक खान–पान का आनंद लेने, ग्रामीण संस्कृति को समझने, और प्राकृतिक सौंदर्य का आनंद लेने का मौका मिलता है। यह न केवल पर्यटकों के लिए एक नया अनुभव होता है, बल्कि ग्रामीण समुदाय के लिए आय का एक नया स्रोत भी बन जाता है। कृषि–पर्यटन का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में पर्यटन को बढ़ावा देकर स्थानीय लोगों की आर्थिक स्थिति को सुधारना है।

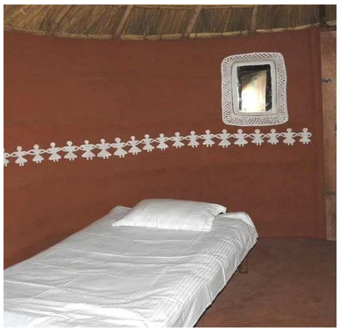

ग्रामीण परिवर्तन की जरूरत

भारत की अधिकांश आबादी आज भी गांवों में रहती है, और कृषि उनकी आजीविका का मुख्य साधन है। हालांकि, पारंपरिक कृषि पद्धतियों और बदलते मौसम के कारण किसानों की आय में कमी आई है। इसके अलावा, ग्रामीण युवाओं का शहरों की ओर पलायन भी एक बड़ी समस्या बन गया है। ऐसे में, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने और ग्रामीण जीवन को आकर्षक बनाने के लिए नए तरीकों की आवश्यकता है। कृषि–पर्यटन इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम साबित हो सकता है। यह न केवल ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर पैदा करता है, बल्कि स्थानीय संस्कृति और परंपराओं को भी संरक्षित करने में मदद करता है।

कृषि–पर्यटन के लाभ

कृषि–पर्यटन एक नया और विकासशील क्षेत्र है जिसमें पर्यटक कृषि क्षेत्रों की यात्रा करते हैं और कृषि गतिविधियों में भाग लेते हैं। इससे कृषि क्षेत्र को आर्थिक लाभ और समृद्धि मिलती है। कृषि–पर्यटन के कई लाभ हैं, जो न केवल किसानों के लिए, बल्कि पर्यटकों और समाज के लिए भी फायदेमंद हैं। कुछ प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं:

1. **आय का नया स्रोत:** कृषि–पर्यटन ग्रामीण समुदाय के लिए आय का एक नया स्रोत बन सकता है। पर्यटकों के आने से स्थानीय लोगों को होटल, रेस्तरां, और परिवहन जैसी सेवाओं के माध्यम से आय प्राप्त होती है। इसके अलावा, किसान अपनी उपज को सीधे पर्यटकों को बेचकर अतिरिक्त आय अर्जित कर सकते हैं।
2. **रोजगार के अवसर:** कृषि–पर्यटन से स्थानीय युवाओं को रोजगार के नए अवसर मिलते हैं। वे गाइड, होस्ट, या सेवा प्रदाता के रूप में काम कर सकते हैं। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की समस्या को कम करने में मदद मिलती है।
3. **ग्रामीण संस्कृति का संरक्षण:** पर्यटकों को ग्रामीण संस्कृति और परंपराओं से जोड़कर, इन्हें संरक्षित करने में मदद मिलती है। यह स्थानीय लोगों को अपनी संस्कृति पर गर्व करने का अवसर देता है।
4. **किसानों की आय में वृद्धि:** कृषि–पर्यटन से किसानों को अपनी उपज को सीधे पर्यटकों को बेचने का मौका मिलता है, जिससे उनकी आय में वृद्धि होती है। इसके अलावा, पर्यटकों को खेतों में काम करने का अनुभव देकर भी किसान अतिरिक्त आय अर्जित कर सकते हैं।
5. **पर्यावरण संरक्षण:** कृषि–पर्यटन प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग को बढ़ावा देता है और पर्यावरण संरक्षण में मदद करता है। यह पर्यटकों को प्रकृति के करीब लाता है और उन्हें पर्यावरण के प्रति जागरूक बनाता है।

कृषि–पर्यटन के संभावित घटक

कृषि–पर्यटन एक बहुआयामी अवधारणा है, जिसमें विभिन्न घटक शामिल होते हैं। ये घटक ग्रामीण पर्यटन को समृद्ध और आकर्षक बनाने में मदद करते हैं। कृषि–पर्यटन के संभावित घटकों की संक्षिप्त जानकारी निम्नानुसार है:

1. **कृषि अनुभव:** पर्यटकों को खेतों में काम करने का अनुभव देना, जैसे बीज बोना, फसल काटना, या पशुओं की देखभाल करना। फसल कटाई के समय आयोजित होने वाले उत्सवों में पर्यटकों को शामिल करना। जैविक खेती के तरीकों को समझने और उनमें भाग लेने का अवसर देना।
2. **ग्रामीण आवास :** पर्यटकों को अपने घर, गांव व खेतों के पास रहने का अनुभव देना, जहां वे प्रकृति के करीब रह सकें। स्थानीय लोगों के घरों में ठहरने का विकल्प, जहां वे ग्रामीण जीवनशैली को करीब से समझ सकें। पर्यावरण के अनुकूल झोपड़ियों या कॉटेज में ठहरने की सुविधा।
3. **पारंपरिक खान–पान :** ग्रामीण क्षेत्रों के पारंपरिक व्यंजनों का आनंद लेना, जैसे मक्के की रोटी, सरसों का साग, या स्थानीय मिठाइयां। पर्यटकों को स्थानीय व्यंजन बनाने का प्रशिक्षण देना। जैविक तरीके से उगाए गए फल, सब्जियां, और अनाज का स्वाद चखना।

4. **प्राकृतिक सौंदर्य :** हरे–भरे खेत, नदियां, पहाड़ियां, और वन्यजीवन का आनंद लेना। ग्रामीण क्षेत्रों में ट्रेकिंग और हाइकिंग के लिए मार्ग तैयार करना। ग्रामीण क्षेत्रों में पक्षियों को देखने और उनके बारे में जानने का अवसर।

5. **सांस्कृतिक अनुभव :** स्थानीय लोक संगीत और नृत्य का आयोजन करना। स्थानीय हस्तशिल्प और कला को प्रदर्शित करना और पर्यटकों को इन्हें बनाने का अनुभव देना। ग्रामीण क्षेत्रों में मनाए जाने वाले त्योहारों और मेलों में शामिल होने का मौका।

6. **शैक्षिक गतिविधियाँ :** पर्यटकों को आधुनिक और पारंपरिक कृषि तकनीकों के बारे में जानकारी देना। जैविक खेती, वर्मीकम्पोस्टिंग, और डेयरी प्रबंधन पर वर्कशश्प आयोजित करना। छात्रों को ग्रामीण जीवन और कृषि के बारे में शिक्षित करना।

7. **साहसिक गतिविधियाँ :** पर्यटकों को बैलगाड़ी की सवारी का अनुभव देना। खुले मैदानों में कैम्पिंग की सुविधा। ग्रामीण क्षेत्रों में नदियों और झीलों में नौकायन का आयोजन।

8. **स्वास्थ्य और आराम :** प्राकृतिक वातावरण में योग और ध्यान सत्र आयोजित करना। स्थानीय आयुर्वेदिक उपचार और मसाज की सुविधा। जड़ी–बूटियों और प्राकृतिक तरीकों से स्वास्थ्य लाभ।

9. **स्थानीय उत्पादों की बिक्री :** स्थानीय किसानों को अपनी उपज सीधे पर्यटकों को बेचने का मौका देना। स्थानीय हस्तशिल्प और कलाकृतियों की बिक्री के लिए दुकानें स्थापित करना। जैविक खेती से उत्पादित फल, सब्जियां, और अनाज की बिक्री।

10. **पर्यावरण संरक्षण :** पर्यटकों को वृक्षारोपण में शामिल करना। जल संरक्षण के तरीकों को प्रदर्शित करना। पर्यटकों को पर्यावरण के प्रति जागरूक बनाने के लिए कार्यक्रम आयोजित करना।

11. **डिजिटल एक्सपोजर :** पर्यटकों के लिए ऑनलाइन बुकिंग की सुविधा। कृषि–पर्यटन को सोशल मीडिया के माध्यम से प्रचारित करना। उन लोगों के लिए वर्चुअल टूर की सुविधा, जो शारीरिक रूप से नहीं आ सकते।

12. **सामुदायिक भागीदारी :** ग्रामीण समुदाय को कृषि–पर्यटन के प्रबंधन और संचालन में शामिल करना। किसानों और स्थानीय लोगों को सहकारी समितियों के माध्यम से जोड़ना। पर्यटकों को स्थानीय विकास परियोजनाओं में स्वयंसेवी के रूप में शामिल होने का अवसर देना।

13. **सुरक्षा और सुविधाएं :** पर्यटकों की सुरक्षा के लिए पर्याप्त उपाय करना। स्वच्छ पानी, शौचालय, और प्राथमिक चिकित्सा की सुविधा। पर्यटकों को जानकारी और मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए सूचना केंद्र स्थापित करना।

कृषि–पर्यटन के ये घटक ग्रामीण क्षेत्रों को आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक रूप से समृद्ध बनाने में मदद कर सकते हैं। इन्हें सही तरीके से लागू करके ग्रामीण भारत को एक नई पहचान दी जा सकती है। यह न केवल पर्यटकों के लिए एक अनूठा अनुभव प्रदान करेगा, बल्कि ग्रामीण समुदाय के लिए आय और रोजगार के नए अवसर भी पैदा करेगा।

कृषि–पर्यटन के उदाहरण : भारत में कई राज्यों ने कृषि–पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए पहल की है। महाराष्ट्र का ''अग्रोटूरिज्म डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन'' एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसने किसानों को पर्यटन से जोड़कर उनकी आय में वृद्धि की है। इसी तरह, केरल के ''फार्म टूरिज्म'' और पंजाब के ''रूरल टूरिज्म'' ने भी ग्रामीण पर्यटन को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाया है। इन राज्यों में पर्यटकों को खेतों में काम करने, पारंपरिक खान–पान का आनंद लेने, और ग्रामीण संस्कृति को समझने का मौका मिलता है।

चुनौतियां और समाधान : हालांकि कृषि–पर्यटन के कई फायदे हैं, लेकिन इसके सामने कुछ चुनौतियां भी हैं। इनमें बुनियादी ढांचे की कमी, पर्यटकों की सुरक्षा, और स्थानीय लोगों का जागरूक न होना शामिल है। इन चुनौतियों को दूर करने के लिए सरकार और निजी संस्थाओं को मिलकर काम करने की आवश्यकता है। बुनियादी ढांचे को मजबूत करने, पर्यटकों के लिए सुरक्षित वातावरण बनाने, और स्थानीय लोगों को प्रशिक्षित करने से इन समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। इसके अलावा, सरकार को कृषि–पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए नीतियां बनानी चाहिए और वित्तीय सहायता प्रदान करनी चाहिए।

भविष्य की संभावनाएं : कृषि–पर्यटन का भविष्य उज्ज्वल है। जैसे–जैसे शहरी लोग प्रकृति और शांति की तलाश में गांवों की ओर रुख कर रहे हैं, कृषि–पर्यटन की मांग बढ़ती जा रही है। इसके अलावा, सरकार की ''ग्रामीण पर्यटन'' और ''स्वदेशी पर्यटन'' जैसी योजनाएं भी इस क्षेत्र को बढ़ावा दे रही हैं। अगर सही तरीके से इसे लागू किया जाए, तो कृषि–पर्यटन ग्रामीण भारत के परिवर्तन की नींव रख सकता है। यह न केवल ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करेगा, बल्कि ग्रामीण जीवन को एक नई पहचान भी देगा।

निष्कर्ष : कृषि–पर्यटन न केवल ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने का एक साधन है, बल्कि यह ग्रामीण जीवन को एक नई पहचान देने का भी काम कर रहा है। यह ग्रामीण और शहरी लोगों के बीच एक सेतु का काम करता है, जो दोनों को एक–दूसरे के करीब लाता है। अगर हम सही दिशा में कदम बढ़ाएं, तो कृषि–पर्यटन ग्रामीण भारत के लिए एक नई क्रांति ला सकता है। आइए, हम सब मिलकर इस अवधारणा को साकार करने का प्रयास करें और ग्रामीण भारत को एक नई ऊंचाई पर ले जाएं। कृषि विश्वविद्यालय, कोटा के अन्तर्गत क्रियाशील इकाईयाँ–जैसे कृषि विज्ञान केन्द्र, सवाई माधोपुर, बून्दी, झालावाड़, कोटा तथा उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़ पर भी एग्रोट्यूरिज्म की संभावनाएं तलाशी जा सकती है।

***

GAJ CHANDRA POLYMERS PRIVATE LIMITED
JAIPUR, RAJASTHAN

SunproMaX®

स्मार्ट किसान की पहली पसंद

UV STABILISED · 100% VERGIN MATERIAL · TRACTOR READY · LONG DURABILITY · HIGH CROP YEILD · WEED CONTROL · NO SOIL EROSION · SAVE WATER

मल्च फिल्म
25 माइक्रॉन
30 माइक्रॉन
50 माइक्रॉन
100 माइक्रॉन
150 माइक्रॉन

ड्रिप पाइप
एचडीपीई पाइप
पीवीसी पाइप

हमारे यहां कृषि से संबंधित सभी प्रकार के उपकरण मिलते हैं।

पॉन्ड लाइनर
300 माइक्रॉन
500 माइक्रॉन
1000 माइक्रॉन
1500 माइक्रॉन
2000 माइक्रॉन
3000 माइक्रॉन

स्प्रिंकलर सिस्टम
1200mm त्रिशूल
1500mm त्रिशूल
मिनी स्प्रिंकलर सेट

सब्सिडी मंजूर

संपर्क करें
+91 - 7230080250 Abhishek Sharma
+91 - 6375902900 Dhruve Sharma
gajchandrapolymers@gmail.com

रजि. नं. : RAJHIN/2021/81869 पंजीयक समाचार पत्र भारत सरकार

पोस्टल पंजीकृत संख्या कोटा/323/2023–25

स्वामी प्रकाशक : डॉ. प्रताप सिंह, निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Website : https://aukota.org
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com
दूरभाष : **0744- 2326727**

पुस्त प्रेष्य ____________________

स्वामी निदेशक प्रसार शिक्षा, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा प्रकाशक डॉ. प्रताप सिंह, मुद्रक श्री जमील अहमद, मैसर्स डायमण्ड प्रिन्टर्स, शॉप नं. 2, काली मस्जिद के पास, नई धानमण्डी, कोटा से मुद्रित एवं निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, बोरखेड़ा, कोटा, राज. से प्रकाशित, प्रधान संपादक डॉ.प्रताप सिंह